भारती ग्रन्थमाला सं० २

फिजी द्वीप में मेरे २१ वर्ष

पं० तोताराम सनाढ्य

भारती ग्रन्थमाला नं० ५। २

फ़िजी में मेरे २१ वर्ष।

लेखक

पण्डित तोताराम सनाढ्य

प्रकाशक

भारती-भवन फ़ीरोज़ाबाद (आगरा)

पण्डित ओंकारनाथ बाजपेयी के प्रबन्ध से ओंकार प्रेस प्रयाग में छपा।

द्वितीय बार २०००] सं० १९७२ [मू० ।=) आना

प्रकाशक का निवेदन

पाठकगण !

आज हम आप लोगों की सेवा में "फ़िजी द्वीप में मेरे २१ वर्ष" नामक पुस्तक का द्वितीय संस्करण लेकर उपस्थित होते हैं। वास्तव में हम उन महानुभावों को हार्दिक धन्यवाद देते हैं, जिनकी कृपा से हमें द्वितीय संस्करण के प्रकाशित करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। निम्नलिखित पत्रोंके संपादकों और सञ्चालकों के हम अत्यन्त ऋणी और कृतज्ञ हैं।

भारतमित्र, हिन्दी चित्रमय जगत, नवजीवन, प्रताप, विद्यार्थी, सुधानिधि, प्रभा, जैनहितैषी, प्रभात, भारतसुदशा प्रवर्तक, तरङ्गिणी, हिन्दी समाचार, नवनीत, भारतोदय, चतुर्वेदी, अभ्युदय और सद्धर्म प्रचारक।

पुस्तक की सफलता

यद्यपि प्रकाशकको यह शोभा नहीं देता कि अपनी पुस्तक के विषय में प्रशंसा युक्त शब्द कहे क्योंकि लोग उसे नोटिस बाज़ी ख्याल कर सकते हैं, तथापि हम दो चार शब्द पुस्तक की सफलता के विषय में कहने से नहीं रुक सकते। इसका कारण यही है कि जिन पत्रों के सम्पादकों तथा संचालकों ने हमें कृपापूर्ण सहायता दी है, उनकी सेवा में हम निवेदन करना चाहते हैं कि आपकी सहायता का सर्वथा सदुपयोग ही हुआ है। हिन्दी, अंग्रेज़ी, बंगाली गुजराती तथा उर्दू व मराठी पत्रों ने इस पुस्तक के विषय में जो सम्मतियां दी हैं,

उन से पुस्तककी सफलता का कुछ कुछ पता लग सकता है।

बंगाली के 'भारतवर्ष' नामक मासिक पत्र में, जोकि बङ्गाली भाषा में ही नहीं बल्कि भारतकी सारी देश भाषाओं में सर्वोत्कृष्ट मासिक पत्र है, इस पुस्तक के विषय में एक सचित्र प्रशंसात्मक लेख छपा था इस लेख के लेखक श्रीयुत हंसेश्वर देव शर्मा एम० ए० हैं पूना के सुप्रसिद्ध मराठी पत्र 'केसरी' ने १॥ डेढ़ कालम में इस पुस्तक की बड़ी बढ़िया आलोचना की, जिसका कि फल यह हुआ कि चार महाराष्ट्रीय सज्जनों ने इस पुस्तक के मराठी अनुवाद करने की आज्ञा मांगी। हर्ष की बात है कि खानापुर बेलगांव से निकलने वाले प्रसिद्ध मराठी पत्र 'लोकमित्र' के उप सम्पादक श्रीयुत सीताकान्त जी ने इस पुस्तक का मराठी अनुवाद कर लिया है। यह अनुवाद शीघ्र ही प्रकाशित होगा। सुप्रसिद्ध गुजराती पत्र 'प्रातःकाल' के सपादक इस पुस्तकका गुजराती अनुवाद प्रकाशित करेंगे। इस पुस्तक का उर्दू अनुवाद हो चुका है। अनुवादक हैं हिन्दी के प्रसिद्ध राष्ट्रीय लेखक श्रीयुत पीर मुहम्मदजी म्यूनिस। हम आप के अत्यन्त अनुग्रहीत हैं। यह अनुवाद बहुत जल्दी छपेगा। युक्त प्रान्त के सर्वोत्तम अंग्रेज़ी पत्र Leader लीडर के सम्पादक ने एक बड़ी ज़ोरदार सम्पादकीय टिप्पणी इस पुस्तक के विषय में लिखी थी। इस टिप्पणी में उन्होंने लिखा था "We hope the startling disclosers made in this book will receive the best attention from the Government of India" अर्थात् हम आशा करते हैं कि जो आश्चर्यदायक पोलें इस पुस्तक में खोली गई हैं उनकी ओर भारतसरकार

का सर्वोत्तम ध्यान आकर्षित होगा । सर्व श्रेष्ठ भारतीय मासिक पत्र Modern Review के सम्पादक ने अपनी एक संपादकीय टिप्पणी में लिखा था "It woudd be good if somebody could publish an English translation of Pandit Tota Ram's Hindi book. For its own information the Government of India might get it translated." अर्थात् यदि कोई पंडित तोताराम की हिन्दी पुस्तक का अंग्रेज़ी अनुवाद प्रकाशित कर दे तो बड़ी अच्छी बात हो। भारत सरकार ही अपने लिये इस पुस्तक का अनुवाद करा ले। इस टिप्पणी के प्रकाशित होने के दो चार दिन बादही प्रसिद्ध भारत हितैषी Mr. C.F. Andrews मिस्टर सी० एफ़० एण्ड्रूज का कृपा पत्र आया उसमें उन्होंने लिखा था "I have got a translation made for me of your excellent book. It is very nearly completed. I shall use it freely." अर्थात् मैंने आपकी अत्युत्तम पुस्तक का अंग्रेज़ी अनुवाद अपने लिये करवा लिया है। यह अनुवाद लगभग समाप्त होगया है। मैं उसका खूब प्रयोग करूंगा।

बड़े २ विद्वानों की सम्मति में कुली प्रथा के विरुद्ध आन्दोलन में इस पुस्तक ने बड़ी सहायता दी है। मिस्टर एण्ड्रूज ने लिखा था मैं आप को विश्वास दिलाता हूं कि शर्तबन्दी की गुलामी के उठा देने में इस पुस्तक से बड़ी भारी सहायता मिलेगी।

भारत के कई प्रसिद्ध नेताओं ने इस क्षुद्र पुस्तक को पढ़ लिया है और सन्तोष प्रगट किया है। फ़िजी द्वीप में भी इस

पुस्तक का अच्छा प्रभाव पड़ा है। इन बातों पर विचार करते हुए यह कहना अनुचित न होगा कि इस क्षुद्र पुस्तकको पूरी पूरी सफलता प्राप्त हुई है।

ग्रन्थकार के विषय में दो बातें

पुस्तक के रचयिता पं० तोताराम जी सनाढ्य के विषयमें दो चार बात कहना हमने अत्यन्त आवश्यक समझा है। इस के कई कारण हैं। कुछ लोग तो पं० तोताराम जी को निरे कोरम कोर कुली ही समझते हैं और कुछ लोग उन्हें 'भारत गौरव' महापुरुषों की कोटि में रखकर अत्युक्ति की भी अत्युक्ति कर देते हैं। पं० तोताराम जी इन दोनों में से कोई भी नहीं हैं। पण्डित जी एक साधारण आदमी हैं। आप साधारणतया अच्छी हिन्दी लिख पढ़ सकते हैं फ़िजियन भाषा के आप अच्छे ज्ञाता हैं और सिर्फ़ थोड़ी सी टूटी फूटी अंग्रेज़ी जानते हैं। अंग्रेज़ी से हिन्दी तथा हिन्दी से अंग्रेज़ी अनुवाद आपको दूसरों से कराना पड़ता है। जो लोग पण्डित जी को बहुत ही बढ़े चढ़े विद्वान समझते हैं. वे भूल करते हैं। हां हम यह कहे बिना नहीं रह सकते कि पंडित जी बड़े देश भक्त हैं और बड़े अनुभवी हैं। फ़िजी के प्रवासी भारतवासियों के लिये आपने जो काम किया है, तथा जो काम आप कर रहे हैं वह अत्यन्त प्रशंसनीय है। आपके फ़िजी के कार्य के विषय में हम अपनी ओर से कुछ न कहकर एक अभिनन्दन पत्रसे जो फ़िजी प्रवासी भारतीयों ने आप को दिया था, कुछ वाक्य उद्धृत करते हैं।

"आपने २१ वर्ष रहकर हम सब फ़िजी प्रवासी भारत-

वासियों के साथ जो भलाई की है उसके लिये हम सब आप के आजन्म ऋणी रहेंगे। आपने सनातन धर्म की पताका को फ़िजी में फहराकर हम सब को धर्म में प्रवृत्त किया ईश्वर आपको इस उपकार का बदला देवेगा। महात्मा गांधी जी और डाकृर मणिलाल जी से पत्र व्यवहार करके, डाकृर मणि लाल जी को बुलाने के लिये पैसा इकट्ठा करनेके निमित्त आप अपनी गांठ का पैसा ख़र्च कर पहाड़ व जंगलों में कोठियों में घूमे और अपनी स्त्री औरबच्चों की भी पर्वाह न करके २६०० रु० इकट्ठा किया और डाक्टर मणिलाल जी को बुलाया। यह कहना अनुचित न होगा कि डाक्टर जी आज आप ही के कठिन परिश्रम से आये हैं। भारत सरकारने जो कमीशन हम लोगों के दुख सुखकी जांच करनेके लिये भेजी थी, उसके जांच करने की सूचना फ़िज़ीके एजेण्ट जनरलने यहांके गोरे ज़मींदारों कोदेदी थी; हम लोगों को स्वप्न में भी कमीशन के आने की ख़बर न थी। आपने ऐसे समय में अपनी बुद्धिमत्ता दिखला, कुली एजेण्ट से उपरोक्त कमीशन की जांच का नोटिस लाकर अँग्रेज़ी से हिन्दी में तर्जुमा कराके तमाम कोठियों में पहुंचाया.........
......और भी कुन्ती का दुख देख उस पर गुज़रे जुल्म आपने ही भारत के समाचारपत्रों में उद्धृत कराके भारत के नेता तथा सरकार तक पहुंचाये आपनेही यह बात एजेण्ट जेनरल तक पहुंचाई कि हिन्दू मुसलमानों के धार्मिक विवाहों को सरकार स्वीकार करे ....."

३० मार्च सन् १९१४ के पैसिफ़िक हैराल्ड नामक गोरों के एक पत्र ने लिखा था:—

" Tota Ram is leaving for good and his

departure is much felt by the Indians of Fiji, as he has been one of the leading Aryan lecturers and debaters in the colony... It is noteworthy that Pandit Tota Ram is the First Indian who has received an address from his fellow countrymen in Fiji" ।

अर्थात् पं० तोताराम हमेशा के लिये फ़िजी को छोड़कर आ रहे हैं। उनके जाने से फ़िजी प्रवासी भारतवासियों को बड़ा खेद हुआ है क्योंकि वे इस उपनिवेश में आर्य्य धर्म पर व्याख्यान देनेवाले तथा शास्त्रार्थ करनेवालोंमें से एक मुख्य पुरुष रहे हैं......यह बात ध्यान देने योग्य है पं० तोताराम जी पहिले ही भारतवासी हैं जिन्हें कि अपने फ़िजी प्रवासी देश भाइयों से अभिनन्दन पत्र मिला है।

प्रसिद्ध मिशनरी मिस्टर J. W. Burton साहब ने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'फ़िजी आव टुडे' Fiji of to-day में आपको 'A well educated Brahmin clearheaded and cool debater' एक सुशिक्षित ब्राह्मण शुद्ध मस्तिष्क-वाला और शान्ति पूर्वक शास्त्रार्थ करने वाला लिखा है और आप को फ़िजी के हिन्दुओं का मुखिया समझा है ।

भारत में आये हुए आपको एक साल सेअधिक होगया। इस बीच में आपने कुली प्रथा के विरुद्ध बहुत कुछ आन्दोलन किया है कलकत्ता, लाहौर, अम्बाला, मथुरा आदि अनेक स्थानों में आप कुली प्रथा के विरुद्ध व्याख्यान दे चुके हैं। मदरास कांग्रेस में आप फिज़ी के प्रतिनिधि होकर सम्मिलित हुये थे। और कांग्रेस के प्लेटफ़ार्म से आध घंटे तक राष्ट्रभाषा हिन्दी

में कुली प्रथा के विरुद्ध व्याख्यान दिया था सुप्रसिद्ध पत्र भारत मित्र ने लिखा था "कुलियों के कष्टोंके विषय में हमारे पाठक बहुत कुछ जानते हैं, परन्तु कांग्रेसवाले इस विषयमें कुछ नहीं जानते। यदि फ़िजी प्रवासी भारतवासी तोतारामजीको अपना प्रतिनिधि बनाकर न भेजते, तो इसकी भी आशा न थी" हरिद्वार के कुम्भ पर आपने निज के व्यय से बारह दिन तक कुली प्रथा के विरुद्ध प्रचार किया था और ५० सहस्र विज्ञापन आरकाटियों के विरुद्धबँटवाये थे। कितने ही गावों में घूम घूम कर आपने टापुओं के दुःख सुनाये हैं। इस विषय में आप बिना किसी दूसरे की सहायता के ७००) रुपये अपनी गांठ से खर्च कर चुके हैं। फ़िजी में भी कुली प्रथा के विरुद्ध आपने थोड़ा बहुत काम किया था। २३ सितम्बर सन् १९१२ को आपने श्रीमान् महर्षि गोखले की सेवा में बांकीपुर कांग्रेस को निम्न लिखित तार भेजा था।

Indians Fiji wish success congress move resolution stop recruitment coolies disproportion women murders crimes immorality differential treatment education representation grievences many ill-treatments plantations.

फ़िजी की धार्मिक स्थिति सुधारने के लिये भी आपने कुछ काम किया था। यह आपके ही प्रयत्न का फल था। कि सन् १९०२ ई० में फ़िजी के नाबुआ ज़िले में रामलीला प्रारंभ हुई लगातार सात आठ वर्ष तक आपने रामलीला का वहां प्रबन्ध किया था। यह रामलीला दो उद्देश्यों से कराई जाती थी एक तो यह कि प्रवासी भारत वासियों के हृदय में अपने

धर्म तथा अपने उत्सवों पर श्रद्धा बनी रहे तथा शर्त बन्धे भाई बहिनों के दुःखों को जानने का अवसर मिले ।

किम्बहुना पं० तोताराम जी जो उपयोगी काम आज कल कर रहे हैं उसमें उन्हें दूसरों का सहायता की बड़ी आवश्यकता है। यदि दूसरे आदमी इस कार्य में उनका हाथ नहीं बटावेंगे तो अर्थाभाव के कारण दो चार महीने बाद उन्हें अपना काम छोड़ना पड़ेगा ।

हम पंडित तोताराम जी के अत्यन्त कृतज्ञ हैं कि उन्हों ने अपनी इस पुस्तक को भवन द्वारा प्रकाशित करवा कर भारती भवन की ख्याति को बढ़ाया है ।

निवेदक
सभासद 'भारती भवन'
फीरोज़ाबाद

ग्रन्थकर्ता की प्रार्थना

प्रिय देश बन्धु !

मैं वास्तव में उन महानुभावों का अत्यन्त कृतज्ञ हूं जिन्होंने मेरी इस क्षुद्र पुस्तक को अपनाकर मेरे प्रयत्न को सफल किया है। जिन समाचार पत्रों के सम्पादकों ने मुझे इस कार्य में सहायता दी है उनका मैं आजन्म ऋणी रहूंगा। मैं उन्हें विश्वास दिलाता हूं कि मैंने उनकी सहायता का दुरुपयोग नहीं किया यह उन्हीं की सहायता का फल था कि मैं चार-सौ से अधिक पुस्तक हरद्वार कुम्भ, लखनऊ साहित्य सम्मेलन तथा मदरास कांग्रेस के उत्सव पर बिना मूल्य वितरण कर सका, और उन्हीं की सहायता के कारण मेरी तुच्छ पुस्तक को आशातीत सफलता प्राप्त हुई। जो थोड़ा सा काम मैं इस विषय में अपनी तुच्छातितुच्छ बुद्धि अनुसार करता हूं उसके लिये मुझे प्रशंसात्मक शब्दों तथा धन्य-वादों की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि ऐसा करना मेरा कर्तव्य ही है।

यदि हो सका तो शीघ्र ही मैं अपनी दूसरी पुस्तक लेकर आप की सेवा में उपस्थित होऊंगा।

विनीत प्रार्थी

तोताराम सनाढ्य

ओ३म्

फ़िजी द्वीप में मेरे २१ वर्ष

मेरा जन्म सन् १८७६ ईसवी में हिरनगौ (फ़ीरोज़ाबाद) में सनाढ्य कुल में हुआ था। मेरे पिता पं० रेवतीराम जी का देहान्त सन् १८८७ ई० में होगया, और मैं, मेरी मां, व मेरे भाई रामलाल और दुर्गाप्रसाद अनाथ रह गये। पिताजी ने हम लोगों के लिये कोई ४०००) की गहने इत्यादि की सम्पत्ति छोड़ी थी परन्तु वह कुल एकही वर्ष में उड़ गई। कारण यह था कि जिन महाजनों के यहां गहने रखकर रुपये उधार लिये गये, उन्होंने बहुत कम मूल्य में ही गहने रख लिये। इस के कारण ४०००) का गहना थोड़े ही दिनों में व्यय होगया। वे दरिद्रता के दिन मुझे आज तक स्मरण हैं और जब मैं उन दिनों की कल्पना अपने मस्तिष्क में करता हूं तो मेरे हृदयाकाश में एक दुःख की घटा छा जाती है। हा! निर्धनता बड़ी बुरी वस्तु है।

मेरा बड़ा भाई रामलाल इन दुखों से पीड़ित होकर कलकत्ता चला गया और वहां रेली ब्रादर्स के यहां ८) महीने की मुनीमगीरी की नौकरी कर ली। मेरी माता इस निर्धनता से बड़ी पीड़ित थी। ८) महीने में मेरा भाई स्वयं अपना व्यय

चलाता था और थोड़ा बहुत घर भी भेज दिया करता था। मैं हिरनगौ की एक पाठशाला में तीसरे दर्जे में पं० कल्याण प्रसाद के पास पढ़ता था। मेरी माता मुझ से कहा करती थी "बेटा! जिस तरह हो अब तो अपने पेटपालन का उपाय सोचो।" माता का दुख मुझ से न देखा गया, अतएव सन् १८९३ ई० में नौकरी के लिये मैं घर से निकल कर पैदल चल दिया। मेरे पास कुल सात आने पैसे थे। मार्ग में अनेक कठिनाइयों का सामना करता हुआ कोई १९ दिन में प्रयाग पहुंचा। बस, इसी स्थान से मेरी तुच्छ जीवनी की दुःख-जनक राम कहानी प्रारम्भ होती है।

प्रयाग में पहुंच कर मैंने भागीरथी के तट पर स्नान किये तदनन्तर दारागंज के बच्चा नामक एक अहीर से मेरी भेंट होगई। उस अहीर ने मेरा सब हाल सुनकर मुझ पर दया की और मुझे अपने घर लेगया। मैं लगभग २ महीने उस अहीर के यहां रहा। उस अहीर ने जिस कृपा का वर्ताव मेरे साथ किया उसे मैं जन्म पर्य्यन्त नहीं भूलूंगा। जब तीर्थराजमें रहते रहते मुझे बहुत दिन होगये और कोई नौकरी नहीं मिली तो मैंने विचार किया कि चलो अपने घर ही लौट चलें; परन्तु फिर मेरे मन में यही आया कि अब घर चल कर माता के वे कष्ट मुझ से देखे न जावेंगे, उसे कुछ भी सहायता न देते हुए उसके ऊपर भारस्वरूप होना ठीक नहीं। कभी माता का

प्रेम मुझे घर की ओर खींचे लाता था और कभी माता के दुखों की स्मृति मुझे इस बात के लिये बाध्य कर रही थी कि मैं कहीं कोई नौकरी कर लूं और घर न जाऊं। इस प्रकार मैं दुबिधा में पड़ा हुआ था।

एक दिन मैं कोतवाली के पास चौक में इसी आर्थिक चिन्ता में निमग्न था कि इतने में मेरे पास एक अपरिचित व्यक्ति आया और उसने मुझ से कहा "क्या तुम नौकरी करना चाहते हो ?" मैंने कहा 'हां'। तब उसने कहा 'अच्छा हम तुम्हें बहुत अच्छी नौकरी दिलवावेंगे। ऐसी नौकरी कि तुम्हारा दिल ख़ुश होजावे।' इस पर मैंने कहा मैं नौकरी तो करूंगा लेकिन ६ महीने या सालभर से अधिक दिन के लिये नौकरी नहीं कर सकता'। उसने कहा अच्छा ! आओ तो सही, जब तुम्हारी इच्छा हो तब नौकरी छोड़ देना कोई हर्ज नहीं, चलो जगन्नाथ जी के दर्शन तो कर लेना। मेरी बुद्धि परिपक्व तो थी नहीं मैं बातों में आगया। पाठकगण ! हा ! इसी तरह धोखे में आकर सहस्रों भारतवासी आजन्म कष्ट उठाते हैं। हे मेरे सुशिक्षित देशबन्धुओ ! क्या आपने कभी इन भाइयों के विषय में कुछ विचार किया है ? क्या आप के हृदय में कभी इन दुःखित भाइयों के लिये कुछ कष्ट हुआ है ? क्या कभी इसी सजला सफला मातृभूमि के उन पुत्रों के विषय में आपने सुना है जो कि डिपोवालों की दुष्टता से दूसरे देशों में भेजे

आते हैं ? क्या इन लोगों के आर्त्तनाद को सुनकर आप के कान पर जूं भी नहीं रेंगेगी ? ध्यान रखिये केवल अपना पेट भर लेना ही आप का कर्त्तव्य नहीं है ।

यस्मिञ्जीवति जीवन्ति बहवः सोऽत्र जीवतु ।
वयांसि किं न कुर्वन्ति चञ्च्वा सोदरपूरणम् ॥

किम्बहुना वह आरकाटी मुझे बहकाकर अपने घर लेगया वहां जाकर मैंने देखा कि एक दालान में लगभग १०० पुरुष और दूसरे में क़रीब ६० स्त्रियां बैठी हुई हैं । कुछ लोग गीली लकड़ियों से रसोई कर रहे थे और चूल्हा फूंकते २ हैरान हो रहे थे । उस आरकाटी ने मुझे एक मूढ़ा पर बैठा दिया । उन स्त्रियों को देखकर मैंने सोचा कि ये पुरुष तो नौकरी करने के लिये जा रहे हैं परन्तु बेचारी ये स्त्रियां कहां जा रही हैं । लेकिन उस समय उन स्त्रियों से बातचीत करने की उस आरकाटी ने बिलकुल मनाई कर रक्खी थी । वहां से न तो कोई बाहर आ सकता था और न कोई बाहर से भीतर आ सकता था । आरकाटी ने मुझ से कहा तुम यहीं चावलों का भात बना लो, मैं अभी चावल तुम्हें देता हूं मैंने कहा मैं भात बनाना नहीं जानता इसी ब्राह्मण के साथ जो रसोई बना रहा है, मैं भी खा लूंगा । आरकाटी उन लोगों को समझाता था "देखो भाई जहां तुम नौकरी करोगे वहां तुम्हें यह दुख नहीं सहने पड़ेंगे । तुम्हें वहां किसी बात की तकलीफ़ नहीं होगी

खूब पेटभर गन्ने और केले खाना और चैन की वंशी बजाना।"

तदनन्तर तीसरे दिन वह आरकाटी हम सब को मजि-स्ट्रेट के पास ले जाने की तय्यारियां करने लगा। कुल १६५ स्त्री पुरुष थे। सब गाड़ियों में बन्द किये गये और कोई आध घंटेमें हम लोग कचहरी पहुंचे। उस आरकाटी ने हम लोगोंसे पहिले ही कह रक्खा था कि साहब जब तुम लोगों से कोई बात पूंछे तो 'हां' कहना, अगर तुम ने नाहीं करदी तो बस तुम पर नालिश करदी जावेगी और तुम्हें जेल काटनी पड़ेगी। सब लोग एक २ करके मजिस्ट्रेट के सामने लाये गये। वह प्रत्येक से पूंछता था "कहो तुम फ़िजी जाने को राज़ी हो?" मजिस्ट्रेट यह नहीं बतलाता था कि फ़िजी कहां है, वहां क्या काम करना पड़ेगा तथा काम न करने पर क्या दण्ड दिया जावेगा। उस मजिस्ट्रेट ने १६५ आदमियों की रजिस्ट्री कोई २० मिनट में कर दी। इस बात से पाठक अनुमान कर सकते हैं कि मजिस्ट्रेट साहब भी किसी न किसी तरह अपना पिण्ड छुड़ाना चाहते थे, नहीं तो यह काम इतनी जल्दी कैसे हो सकता है।

यहां से चल कर हम सब रेल में लादे गये। न तो गाड़ी में बैठे हुए मनुष्यों से और न बाहर के आदमियों से बातचीत करने पाते थे। यदि कोई आपस में बातचीत करते तो उठा दिये जाते थे। हां यह कहना भूल गया वह ट्रेन स्पेशल थी

और सीधी हवड़े पहुंची, बीच में कहीं नहीं रुकी। हवड़े स्टेशन से सब लोग बन्द गाड़ी में बिठलाये जाकर डिपो में पहुंचाये गये। यहां इमीग्रेशन अफ़सर ने हम सब को एक पंक्ति में खड़ा किया और कहा "तुम फ़िजी जाते हो, वहां तुम्हें १२ आना रोज़ मिलेंगे और ५ वर्ष तक खेती का काम करना होगा। अगर तुम वहां से पांच वर्ष बाद लौटोगे तो अपने पास से किराया देना होगा और अगर १० वर्ष बाद लौटोगे तो सरकार अपने पाससे भाड़ा देगी। तुम लोग वहां से बहुत कुछ रुपये ला सकते हो। केवल बारह आना ही नहीं, बल्कि और भी ऊपर कमा सकते हो। वहां बड़े आनन्दसे रहोगे। फ़िजी क्या है स्वर्ग है!" इस प्रकार उसने बहुत कुछ चिकनी चुपड़ी बातें कहीं। हम अशिक्षित लोग कुछ तो पहिले ही से बहकाये हुए थे और रहे सहे उस अफ़सर ने बहका दिये। इमीग्रेशन अफ़सर ने भी यह पूछा "तुम्हारा किसी के पास धन तो नहीं है?" उस आरकाटी ने जो साहब के पीछे खड़ा हुआ था हम लोगों से हाथ से इशारा करदिया कि कुछ मत कहो, हम तुम्हारी चीज़ें अभी दे देंगे। लेकिन साहब के जाते ही वह आरकाटी भी चला गया। फिर कौन देता है और कौन लेता है। कितने ही आदमियों के बर्तन, वस्त्र, रुपये पैसे इत्यादि उस आरकाटी के पास रह गये।

जब वह अफ़सर हम लोगों को समझा रहा था तो मेरे

दिल में एक शंका उत्पन्न हुई। मैंने सोचा पांच वर्ष बहुत होती हैं, न जाने फ़िजी जाकर कैसा कठिन काम करना पड़ेगा और काम न कर सका तो फिर कैसी मार पड़ेगी। यही विचारकर मैं ने कहा "मैं फ़िजी नही जाना चाहता, मैं ने खेती का काम कभी नहीं किया, मेरे हाथ देखिये ये खेती कभी नहीं कर सकते, मैं फ़िजी न जाऊंगा।" यह सुन कर उस अफ़सर ने मुझे दो बंगाली बाबुओं के हवाले किया और उन से कहा 'इसे समझा कर ठीक करो।' मैं ने उनसे भी इनकार किया और कहा " मेरा भाई कलकत्ते में यहीं किसी मुहल्ले में है, मुझे उस से मिल लेने दो, फिर जैसा होगा देखा जावेगा" पर कौन सुनता है! साथ २ मेरे दर्बान रहता था। जब मैं समझाये जाने पर किसी तरह राजी न हुआ तो एक कोठरी में बन्द कर दिया गया। एक दिन एक रात मैं भूखा प्यासा उसी कोठरी में रहा। अन्त में लाचार हो कर मुझे कहना पड़ा कि मैं फ़िजी जाने को राज़ी हूं। क्या करता! वहां कोई अपना आदमी नहीं था जिसे यह दुःख वृत्तान्त सुनाता।

जब मैं कोठरी से बाहर लाया गया तो मैं ने देखा कि ज़बरदस्ती चमार, कोरी, ब्राह्मण इत्यादि सबको एक ही जगह बैठा कर भोजन कराया जाता है। लग भग सबको मिट्टी के जूठे बर्तनों में भोजन कराया गया और पानी पिलाया गया जहां कोई कुछ बोला बस फिर क्या है खूब पीटा गया। मैं ने

यह व्यवस्था देख कर कहा "मैं इन के साथ भोजन नहीं करूंगा चाहे भूखों मर जाऊं।" उस अफ़सर ने कहा "मर जाओ कोई डर नही, तुम्हें नदी में फेंक देंगे।" अंत में मुझे आज्ञा दी गई कि तुम भण्डारी के साथ भोजन कर लिया करो। कपड़े जो हम लोगों के पास अच्छे अच्छे थे धोने के बहाने सब ले लिये गये और एक भंगी स्नान कराने के लिये हम सब को घाट पर ले गया। हम सब को साबुन दिया गया बिचारे बहुत से भोले भाले लोगों ने यह समझा कि हम लोग दूर से आये हैं, हमें जल पान के लिये बर्फ़ी मिली है। कुछ लोगों ने तो उसे कलाकंद जान कर खा भी लिया और फिर हरे राम हरे राम थू थू थू करने लगे। पाठक देखिये किस तरह के सीधे सादे लोगों को आरकाटी बहकाकर ले जाते हैं ये बिचारे साबुन को भी बर्फ़ी समझते हैं, क्या हमारे धर्मोपदेशकों ने जो कि धर्म की धुरी बने हुए हैं और शहरों में ही प्लेटफ़ार्म को व्याख्यान देते २ घिसा करते हैं, कभी उन ग्रामीण बुद्धि के रंकों के ऊपर भी दया की है? क्या कभी ग्रामों में भी आकर किसी ने इनके उद्धार के विषय में भी व्याख्यान देना कर्त्तव्य समझा है? शहरों में तो नित नये उपदेशक बने रहते हैं पर बिचारे ग्रामीणों को ऐसे उपदेश दुर्लभ हैं, इसी से यह साबुन को बर्फ़ी समझ बैठे।

डाक्टरी परीक्षा।—जब जहाज़ पर चढ़ने के दो

या तीन दिन शेष रहे तब हम सब की डाकृरी परीक्षा हुई। पुरुषों और स्त्रियों तक की परीक्षा पुरुष डाकृरों ने ही की। तत्पश्चात् पहिरने के लिये क़ैदियों के से कुर्ते टोपी और पाय-जामा दिये गये। पानी के लिये टीन का लोटा, भोजन रखने के लिये टीन की थाली और सामान रखने के लिये एक छोटा सा थैला दिया गया।

जहाज़ का वृत्तान्त—फिर हम लोगोंके नाम पुकारे गये और हम सब जहाज़ पर चढ़ाये गये। उस समय ५०० भारतवासी अपनी मातृभूमि को छोड़ क़ैदियों और गुलामों की तरह फ़िजी को जा रहे थे। हा! यह किसे ज्ञात था कि वहां पहुंच कर हमें असंख्य कष्ट सहने पड़ेंगे। कितने ही आदमी अपनी माता, पिता, भाई, बहिन इत्यादि के प्रेम में अश्रुओं की धारा बहाते थे। उनके दुःखों की कथा सुनने वाला वहां कोई नहीं था। जो लोग खसखसकी टट्टियों में पड़े रहते हैं और जिन्होंने कि 'Eat drink and be merry' खाओ पीओ और मौज उड़ाओ यही अपने जीवन का उद्देश्य समझ रक्खा है, वे उन बिचारे ५०० भारतवासियों के हाल को क्या जान सकते हैं। उनकी दुर्दशा पर तो वे ही ध्यान दे सकते हैं जिन्होंने कि 'परोपकाराय सतां हि जीवनम्' यही अपना आदर्श मन्त्र बना लिया हो।

किम्बहुना हम लोगों में से प्रत्येक को १॥ फ़ीट चौड़ी

और ६ फ़ीट लम्बी जगह दी गई। इतनी जगह एक मनुष्य के लिये कहां तक पर्याप्त हो सकती है यह आप स्वयं विचार सकते हैं। कई लोगों ने शिकायत की कि इतने स्थान में हम नहीं रह सकते तो गोरे डाकृर ने ललकार कर कहा "साला टुम को रहना होगा"। जब हम लोग बैठ चुके तो हर एक को चार चार विस्कुट और आधी छटांक चीनी दी गई। इन विस्कुटों को गोरे लोग डाग विस्कुट कहते हैं और ये कुत्तोंको खिलाये जाते हैं। हा परमात्मन! हम भारतवासी क्या कुत्तों के समान हैं!! विस्कुटों के विषय में क्या पूंछना है! इतने ज्यादः नरम थे कि घूंसों से टूटे और पानी में भिगो कर खाये गये। लगभग चार बजे जहाज़ छोड़ दिया गया। अब अपनी मातृभूमि के लिये हमारा अन्तिम नमस्कार था। ६ बजे सूर्य भगवान् अस्त हुए। रात को ८ बजे हम लोग सो गये। प्रातः-काल में पहिरेवाले ने हम लोगों को उठा दिया। देखते क्या हैं कि समुद्र में हिलोरें लेता हुआ हमारा जलयान चला जा रहा है। चारों ओर नीले आकाश के अतिरिक्त कुछ नहीं दीख पड़ता था। उस समय हम लोगों के हृदय में अनेकों भाव उत्पन्न हो रहे थे। जिस प्रकार कि कोई स्वतन्त्र पक्षी पिंजरे में बन्द कर दिया जाता है उसी प्रकार हम लोग बन्द कर दिये गये। हा! पराधीनते! तू बड़ी बुरी वस्तु है।

सवेरा होते ही उस जहाज़ के एक अफ़सर ने हम लोगों

में से कुछ को रसोई बनाने के लिये और कुछ को पहिरा देने के लिये चुना, और कुछ लोगों को 'टोपस' का काम करने के लिये नियुक्त किया। लोगों से कहा गया कि टोपस का काम कौन २ करेगा। हमारे भोले भाले भाई नहीं जानते थे कि 'टोपस' क्या बला है। अतएव कितने ही लोगों ने 'टोपस' का काम करनेवालों की सूची में अपना नाम लिखा लिया। अब जहाज़ के अफ़सर ने टोपसवालों से कहा "तुम लोग अपना काम करो" टोपस वालों ने कहा 'क्या काम करें?' तब आज्ञा दीगई कि तुम लोग टट्टियों को साफ़ करो। कितने ही लोगों ने आपत्ति की लेकिन वे पीटे गये और ज़बरदस्ती उनसे मैला उठवाया गया। सारे जहाज़ में त्राहि त्राहि का शब्द गूंजने लगा। क्या हमारा शिक्षित-जनसमुदाय इन दुखित भाइयों की पुकार पर ध्यान देगा? हमारे भाई जहाज़ पर मैला उठावें और हम चुपचाप बैठे रहें क्या हमारे लिये यह लज्जा की बात नहीं है? इन सहस्रों भाइयों के आर्त्तनाद को सुनकर यदि हमारा हृदयद्रवित न हो तो वास्तव में हम कर्त्तव्य-भ्रष्ट हैं।

पीने के लिये दिनमें दो बार एक एक बोतल पानी मिलता है। फिर नहीं मिलता चाहे प्यासे मरो। खाने के विषयमें भी यही बात है। वहीं मछली पकती थी और वहीं भात बनता था। Sea-sickness(समुद्री बीमारी) से भी बहुत से आदमी पीड़ित हो गये। कई तो विचारे कै करके इस संसार से सदा

के लिये बिदा होगये । वे लोग समुद्र में फेंक दिये गये ।

इस प्रकार तीन महीने १२ दिन में हमारा जहाज़ सिंगापुर बोर्नियो इत्यादि के किनारे होता हुआ फ़िजी पहुंचा । पाठकों के मनोरंजनार्थ यहां कुछ फ़िजी के विषय में लिखा जाता है ।

फिजी द्वीप—फ़िजी द्वीप-समूह दक्षिण प्रशान्त महासागर में स्थित है । उसके पश्चिम में न्यूहैब्रीडीज़ है । भूमध्यरेखा के दक्षिण में देशान्तरके १५° अंश से लेकर २२° अंश तक और पूर्व और पश्चिम में अक्षांश की १७५° डिग्री से लेकर १७७° डिगरी तक फैला हुआ है । इसमें सब मिलाकर २५४ द्वीप हैं । इन में से लगभग ८० टापुओं में आदमी रहते हैं । फ़िजी द्वीप-समूह का क्षेत्रफल ७४३५ वर्गमील है । सन् १६११ की मनुष्य गणना के अनुसार फ़िजी की जन संख्या १३६५४१ है । इन द्वीपों में दो द्वीप सब से बड़े हैं एक तो वीती लेवू (Viti Levu) और दूसरा वनुआ लेवू (Vanua Levu) इनके अतिरिक्त कन्दावू और तवयूनी नामक टापू भी बड़े २ हैं । इनकी भूमि बड़ी उपजाऊ है और विशेषतः पूर्व की ओर यह द्वीप बहुत कुछ हराभरा दीख पड़ता है । यहां पर कितने ही पहाड़ हैं जिनकी चोटीं हजारों फ़ीट ऊंची हैं । समुद्र के किनारे २ नारियल के बहुत पेड़ होते हैं । यहां रतालू, शकरकंद और नारंगी बहुत पाई जाती हैं । यहां पर पहिले बहुत

कम जानवर थे। फिर पीछे से बहुत से जानवर भेजे गये। गाय, बैल, घोड़ा, बकरी, जंगली सूअर इत्यादि थोड़े बहुत पाये जाते हैं। कबूतर, तोता, बतक इत्यादि चिड़ियां भी जो गर्म मुल्कों में प्रायः हुआ करती हैं, देखने में आती हैं। सन् १८६६ ई० में यहां पर न्यूज़ीलैण्ड और आस्ट्रेलिया से बहुत से यूरोपियन आ आ कर बसने लगे। सन् १८७४ ई० में यह द्वीप-समूह ब्रिटिश सरकार के हाथ में आगया और ब्रिटिश राज्य का उपनिवेश कहा जाने लगा। फ़िजी की राजधानी सूवा है जो कि वीती लेवू के दक्षिण किनारे पर स्थित है। फ़िजी के विषय में विस्तार-पूर्वक आगे चलकर लिखेंगे।

भिन्न भिन्न स्टेटों में बाँट दिये गये:—

फ़िजी में नुकलाओ नामक एक टापू है यहां पर भी एक डिपो है। हम लोग, जो कि कुली के नाम से पुकारे जाते हैं, यहीं उतारे जाते हैं। ज्योंही हमारा जहाज़ वहां पहुंचा त्योंही पुलिस ने आकर उसे घेर लिया जिससे कि हम वहां से भाग न जावें। हम लोगों के साथ वहां गुलामों से भी बुरा बर्ताव किया गया। लोग कहा करते हैं कि दासत्वप्रथा संसार के सब सभ्य देशों से उठ गई है। यह बात ऊपर से तो ठीक मालूम होती है परन्तु वास्तवमें नितान्त भ्रम-मूलक है। क्या आप इस कुली प्रथा को दासत्व प्रथा से कम समझते हैं! इसी न्यायशील ब्रिटिश सरकार के राज्यमें यह प्रथा जारी रहे

यह कितने खेद की बात है! क्या अब बर्क आडला जैसे निष्पक्ष अंगरेज इङ्गलैण्ड में नहीं रहे?

अलमितप्रसंगेन! थोड़ी देर बाद डाक्टर आया और उसने हम सबकी परीक्षा की। सब लोगों के कपड़े हौज़ में एक साथ डालकर गर्म किये गये। कोठीवालों को पहले से ही एजेण्ट जनरल ने आज्ञा देदी थी कि आकर अपने अपने कुली नुकलाओ डिपो से ले जाओ! कोठीवालों ने प्रत्येक मनुष्य का व्यय २१०) इमीग्रेशन विभाग में पहिले से जमा कर दिया था। एजेण्ट जनरल की आज्ञानुसार वे लोग नुकलाओ डिपो में पहुंचे। वहां पर छोटे कुली एजेण्ट ने हम सब को भिन्न २ स्टेटों में जाने के लिये विभक्त कर दिया। फिर उस एजेण्ट ने हम सब को बुलाया और प्रत्येक से कहा "तुम आज से ५ वर्ष तक के लिये अमुक साहब के नौकर हुये" मैं ने कहा 'मैं नौकरी नहीं करता! मैं बिका नहीं हूं। मेरे बाप या भाई ने किसी से कुछ लेकर मुझे बेच नहीं दिया है। मैंने भी किसी से कुछ नहीं लिया!" जब मैंने तीन पांच की तो दो गोरे सिपाहियों ने धक्के देकर मुझे नाव पर चढ़ा दिया। इस प्रकार सब लोग जुदी २ स्टेटों में बांट दिये गये।

स्टेट का हाल:—स्टेट में रहने के लिये कोठरियां मिलती हैं। प्रत्येक कोठरी १२ फुट लम्बी ८ फुट चौड़ी होती है। यदि किसी पुरुष के साथ उसकी विवाहिता स्त्री हो

तो उसे यह कोठरी दी जाती है और नहीं तो तीन पुरुषों या तीन स्त्रियों को यह कोठरी रहने को मिलती है। दिखाने के लिये तो यह नियम बनाया गया है "Employers of Indian labourers must provide at their own expense suitable dwellings for immigrants. The style and dimension of these buildings are fixed by regulations" यानी जो लोग भारतवासी मज़दूरों को नौकर रक्खेंगे, उन्हें अपने ख़र्च से उन मज़दूरों को रहने के लिये अच्छे मकान देने होंगे। इन मकानों की बनावट, लम्बाई चौड़ाई, ऊंचाई इत्यादि नियमों से स्थिर की जावेगी। पाठक यही तीन आदमियों के रहने, उठने, बैठने, सोने, खाना बनाने इत्यादि के लिये १२ फ़ीट लम्बी ८ फ़ीट चौड़ी कोठरी Suitable dwelling है! परमात्मा ऐसे Suitable dwellig अच्छेमकान में किसी को न रक्खे! जिन तीन आदमियों को यह कोठरी मिलती है उनमें चाहे कोई हिन्दू हो या मुसलमान, अथवा चमार कोरी, कोई ही क्यों न हो। यदि कोई ब्राह्मण देवता किसी चमार कोरी इत्यादि के संग आ पड़े तो फिर उन के कष्टों का क्या पूछना है! और प्रायः ऐसा हुआ करता है कि ब्राह्मण लोगों को चमारों के साथ रहना होता है।

पहिले ६ महीने के कष्ट:—पहिले ६ महीने तक स्टेट से रसद मिलती है और इसकेलिये २ शिलिंग ४ पैंस

प्रति सप्ताह के हिसाब से काट लिये जाते हैं । प्रति दिन १० छटांक आटा २ छटांक अरहर की दाल और आधी छटांक घी के हिसाब से सप्ताह भर की रसद एक दिन मिल जाती है । हम लोगों के वास्ते जो कि भारी भारी फावड़े लेकर १० घंटे रोज़ कठिन परिश्रम करते थे भला २॥ पाव आटा एक दिन के लिये कैसे पर्य्याप्त हो सकता है । हम लोग ४ या ४॥ दिन में सप्ताह भर की रसद खा कर बाकी दिन एकादशी व्रत रहते थे अथवा कहीं किसी पुराने भारतवासी से उधार आटा दाल मिल गया तो उसी से अपना पेट भर लेते थे ।

काबुली पठानों पर अत्याचार:

एक बार एक आरकाटी ने ६० काबुली पठानों को बहका कर फ़िजी में भेज दिया । इन लोगों से डिपोवालों ने कहा था कि तुम्हें पलटन में बड़ी बड़ी नौकरियां मिलेंगीं । ये लोग .खूब मोटे ताज़े थे और पलटन में नौकरी पाने की इच्छा से ही फ़िजी जाने को राजी हुए थे । पर जब वे फ़िजी पहुंचे तो उन्हें वहां कुली का काम करना पड़ा । रसद भी उन्हें उतनी ही दी गई जितनी कि औरों को मिलती है, यानी २॥ पाव आटा और आधपाव दाल के हिसाब से ७ दिन का सामान उन्हें एक दिन दे दिया गया । वे लोग एक सप्ताह की रसद को ४॥ साढ़ेचार दिन में ही खाकर बैठ गये । फिर जब उनसे काम करने को कहा गया तो वे बोले "खाना लाओ तो काम

करें" इस पर पुलिस को ख़बर दी गई। फिर क्या था का-न्स्टेबिल और इन्सपेक्टर घर धमके। स्टेट के गोरे ने कहा 'देखिये साहिब ये ६० बदमाश कुली हमें मार डालने और लूट लेने की धमकी देते थे, तब काबुलियों ने कहा ' हम लोग सिर्फ खाना मांगते हैं, बिना खाये काम न करेंगे, और हमने कुछ नहीं कहा' पुलिस लौट गई, काबुली काम पर न गये। फिर उस गोरे कोठीवाले ने काबुलियों से काम पर जाने के लिये कहा। काबुलियो ने फिर भी वही जवाब दिया। गोरा फिर पुलिस को बुला लाया। अबकी बार पुलिस ने उन निहत्थे काबुलियों पर गोली चला कर धमकाया। काबुलियों ने कहा 'हम तो वैसे ही भूखों मरे जाते हैं, और आप हम पर गोली चलाते हैं' इस पर पुलिस फिर लौट गई' घायल काबुली अस्पताल भेजे गये।

तदनन्तर उन काबुलियों से कहा गया कि चलो नुकलाओ डिपो में तुम लोगों के खाने पीने रहने और नौकरी का ठीक प्रबन्ध कर दिया जावेगा। वे इस बात पर सहमत हो गये और सबके सब नुकलाओडिपो में लाये गये। उन्हें खाना बनाने के लिये चावल इत्यादि दे दिये गये और वे अपना भोजन तैयार करने लगे। इधर इमीग्रेशन विभाग के गोरे अफ़सरों ने ५०० फिजी के आदिम निवासी जंगल में छिपा दिये थे। ज्योंही काबुली लोग मुंह में कौर देना चाहते

थे त्यों ही एक सीटी बजाई गई। देखते देखते ५०० जंगली जन निशस्त्र काबुलियों पर आटूटे और उन्हें पकड़ पकड़ कर समुद्र के किनारे ले गये। काबुली लोग ज़बरदस्ती डोंगियों पर बैठा दिये गये और भिन्न भिन्न कोठियों में विभक्त कर दिये गये।

पाठकगण! देखी आप ने इमीग्रेशन विभाग की न्याय-प्रियता और बहादुरी। इस पर कितने ही निष्पक्ष समाचार पत्रों ने ख़ूब खरी २ सुनाई थीं; पर कौन ध्यान देता है!

कठिन परिश्रम

सब लोग नित्यप्रति प्रातःकाल में ४ बजे उठाये जाते हैं और सबको रोटी तैयार करके ५ बजे खेत पर पहुंचना होता है जो स्त्रियां बच्चे वाली होती हैं वे अपने बच्चों को खेत पर ले जाती हैं। लग भग प्रत्येक मनुष्य को १२०० फ़ीट से लेकर १३०० फीट लम्बी और ६ फीट चौड़ी गन्ने की लैन कुदारी से दिन भर को नराने के लिये दी जाती है। इस को Full task पूरा काम कहते हैं। डाक्टर प्रायः लिख दिया करते हैं कि इन लोगों को 'पूरा काम, दिया जावे। जो डाक्टर साहब ३० या ४० जरीब चलने से ही हांप जाते हैं और रूमाल से मुंह पोंछने लगते हैं, वे ही विचारे भूखे लोगों से कठिन परिश्रम करवाते हैं। प्रायः यह हुआ करता है कि उन लोगों पर इतना काम नहीं होता। फिर क्या है चट ही दूसरे दिन सम्मन आ जाता है और मजिस्ट्रेट के सामने कचहरी में मामला पेश

होता है। मजिस्ट्रेट पूछता है 'फलां तारीख़ को तुमने पूरा काम क्यों नहीं किया? वह कहता है 'काम इतना अधिक था कि नहीं हो सका।' मजिस्ट्रेट यह बात सुनकर कहता है "हमारा सवाल यह नहीं है कि शक्तिसे बाहर काम था हमारा सवाल तो यह है कि फलां तारीख़ को काम पूरा किया या नहीं। "हां या नहीं" जो सवाल हम पूछें उसीका जवाब दो अधिक बोलो मत बको।" बिचारे मज़दूर को लाचार हो कर कहना पड़ता है "हां सरकार काम यानी टास्क (ठेका) पूरा न हो सका" बस फिर क्या है दफ़ा कायम होजाती है। मजिस्ट्रेट १० शिलिङ्ग से लेकर १ पौंड तक जुर्माना ठोंक देता है। इस प्रकार बिचारों का १५ या २० दिन का वेतन जुर्माने में ही चला जाता है। मासिक वेतन एक पौंड दो शिलिङ्ग पूरा काम करने पर मिलता है। लेकिन पूरा काम प्रति सैकड़ा पांच आदमी से अधिक नहीं कर सकते, और ये आदमी भी ५ या ६ महीने से अधिक लगातार पूरा काम नहीं कर सकते। मेरे २१ वर्ष के अनुभव में ४०००० भारतवासियों में एक भी ऐसा नहीं मिला जिसने लगातार ५ वर्ष तक पूरा काम किया हो। साधारण मनुष्य १० शिलिङ्ग यानी ७॥ रु० प्रतिमास से अधिक नहीं कमा सकते। इस पर भी फ़िजी में खाद्यपदार्थ भारतवर्ष से दूने तेज़ हैं और क्या कहें सैकड़ों भूखों मरते हैं। कितनेही लोगों को इतना कठिन परिश्रम करने पर भी आधे पेट ही रहना पड़ता है।

ओवरसियरों के अत्याचार—ओवरसियर हम लोगों पर मनमाने अत्याचार करते हैं। कितनेही हमारे भाई वहां पर कठिन परिश्रम के डर से और ओवरसियरों की मार और जेलखाने के भय से फांसी लगाकर मर गये हैं। बहुत दिन नहीं हुए जब कि कई मदरासी नबुआ की कोठी में इसी कारण फांसी लगाकर मर गये थे। इन लोगों की मृत्यु का कारण वहां की मृत्यु विवरणी से ज्ञात हो सकता है। प्रत्येक ज़िले में हम लोगों के दुःख सुख की जांच करने के लिये यद्यपि इमीग्रेशन विभाग की ओर से कुली इन्सपेक्टर नियत हैं; पर ये गोरे इन्सपेक्टर लोग हमारी वास्तविक स्थित को कभी प्रकट नहीं करते। कोठीवालों के यहां बराण्डी उड़ानेवाले ये महाशय भला हम दीन हीन भारतवासियों के दुःख निवारणार्थ कब प्रयत्न कर सकते हैं?

जब ओवरसियर लोग किसी से नाराज़ होते हैं तो उस पर दलेल बोल देते हैं। दलेलवाले को सब आदमियों से अलग बहुत कड़ा काम करना पड़ता है। वहां अकेले में जा कर ये ओवरसियर लोग उसे ख़ूब पीटते हैं पहले तो बिचारे नालिश ही नहीं करते क्योंकि उन्हें डर लगा रहता है कि इन्हीं साहब के आधिपत्य में हमें ५ वर्ष तक काम करना पड़ेगा और यदि कोई करता भी है तो गवाह न मिलने के कारण मुकद्दमा ख़ारिज हो जाता है, ऐसे कितने ही दृष्टान्त हमारे

देखने में आये हैं जिन में ओवरसियरों के डर के मारे भाई इत्यादि निकट सम्बन्धी भी साक्षी नहीं दे सके हैं। इसी दलेल के बहाने ओवरसियर लोग हमारी कितनी ही देश-भगिनियों पर अत्याचार करते हैं। उदाहरणार्थ कुन्ती नामक चमारिन का वृत्तान्त यहां लिखना अनुचित न होगा।

कुन्ती पर अत्याचार—आरकाटियोंने कुंती और उसके पति को लखुआपुर ज़िला गोरखपुर से बहका-कर फ़िजी को भेज दिया था। इन लोगों को वहां पर बड़े २ कष्ट सहने पड़े। इस समय कुन्ती की अवस्था २० वर्ष की थी। बड़ी कठिनाई से कुन्ती ४ वर्ष तक अपने सतीत्व की रक्षा कर सकी। तदनन्तर सरदार और ओवरसियर उस के सतीत्व को नष्ट करने के लिये सिरतोड़ कोशिश करने लगे १० अप्रेल सन् १९१३ को ओवरसियर ने कुन्ती को साबू केरे नाम केले के खेत में, सब स्त्रियों औरपुरुषोंसे पृथक् घास काटने का काम दिया, जहां कोई गवाह न मिल सके और चिल्लाने पर भी कोई न सुन सके। वहां उस के साथ पाशविक अत्याचार करने के लिये सरदार और ओवरसियर पहुंचे। सरदार ने ओवरसियर के धमकाने पर कुन्ती का हाथ पकड़ना चाहा। कुन्ती हाथ छुड़ाकर भागी और पास की नदी में ही कूद पड़ी लेकिन दैव संयोग से जयदेव नामक एक लड़के की डोंगी पास ही थी। कुन्ती डूबते २ बची। जयदेव ने उसेडोंगी पर

चढ़ाकर पार किया। जब कुन्ती ने यह बात अपने कोठीवाले गोरे स्वामी से कही तो उसने जवाब दिया "चला आओ खेत का बात हम सुनना नहीं मांगता"। तत्पश्चात् ता० १३ अप्रेल तक कुन्ती काम पर न गई। तारीख़ १४ अप्रेल को २० जरीब घास उसे खोदने को दी गई और उसके पति को एक मील की दूरी पर काम दिया गया। कुन्ती का पति भी इतना पीटा गया कि बिचारा अधमरा होगया। कुन्ती ने यह समाचार किसी से लिखवा कर 'भारतमित्र' में छपवा दिया भारत सरकार की उस पर दृष्टि पड़ी और कुन्ती के मामले की जांच फ़िजी में कराई गई। इमीग्रेशन अफ़सर वहां पहुंचा और उसने कुन्ती को बहुत धमकाया। पर कुन्ती ने यही कहा कि जो कुछ मैं ने भारतमित्र में छपवाया था बिलकुल ठीक था। यहां पर कुन्ती के धैर्य्य और साहस की जितनी प्रशंसा की जावे थोड़ी है। जाति की चमारिन होने पर भी नदी में कूद कर उस ने अपने सतीत्व की रक्षा की और पराधीन होने पर भी उसने इमीग्रेशन अफ़सर को फटकार बतलाई।

क्या कुन्ती के इस दृष्टान्त को सुनकर भी हमारे भाई इस कुली-प्रथा को रोकने का प्रयत्न नहीं करेंगे?

नारायणी—इस नाम की एक स्त्री नादी ज़िला की नावो नामक कोठी में काम करती थी। इसके एक बच्चा पैदा हुआ जो कि मर गया। बच्चा पैदा होने के दो तीन दिन

के बाद ही ओवरसियर ने यह चाहा कि वह काम पर चले। यद्यपि सरकारी नियम के अनुसार बच्चा पैदा होने पर तीन महीने तक कोई स्त्री काम पर नहीं जा सकती। पर गोरा ओवरसियर भला ऐसे नियमों को क्यों मानने लगा। नारायणी ने कहा "मेरा बच्चा मर गया है। मैं काम पर न जाऊंगी इस पर उस ओवरसियर ने उसे इतना पीटा कि वह एकदम बेहोश होकर गिर पड़ी। पुलिस के गोरे सब-इन्सपेक्टर ने आकर जांच की और उस स्त्री को अस्पताल पहुंचाया। ओवरसियर गिरफ़ार किया गया। सूवा नगर की बड़ी अदालत Suprem court तक यह अभियोग पहुंचा। जब सूवा में स्टीमर से यह स्त्री उतारी गयी तो उसमें इतनी भी शक्ति नहीं थी कि एक फर्लांग भी पैदल चल सके इसीलिये कचहरी तक खाट पर रख कर लाई गयी थी। अभियोग के अन्त में वह गोरा ओवरसियर not guilty अनपराधी होकर छूट गया। उस विचारी स्त्री पर इतनी मार पड़ी थी कि उसका मस्तिष्क ख़राब होगया था वह अभीतक पागलसी रहती है। न्याय का यह एक ज्वलन्त दृष्टान्त है! श्वेत-रंग की महिमा अपार है! इस प्रकार के कितने ही अत्याचार वहां नित्यप्रति हुआ करते हैं। ये ओवरसियर लोग जूतों की ठोकरों से भारतवासियों को पीटना ख़ूब जानते हैं, घूसों की मारसे जड़से दांत तोड़ना भी ख़ूब जानते हैं ये लोग कपड़े जला देते हैं, लात मार कर

खाना फेंक देते हैं, और हम लोगों को मन माने कष्ट देते हैं। ये सब भीतरी दुख हैं बिना गवाह के कचहरी में जाना वृथा हो जाता है। सन् १९१२ ई० में एकबार मैं ज़िला नाद्री की कचहरी में बैठा था वहां पर मैंने एक मामला मजिस्ट्रेट के इजलास पर होते देखा। एक मदरासी ने नवकाई के कम्पनी अस्पतालके श्वेतांग डाक्टर (सुपरिण्टेण्डेण्ट) पर नालिश की थी। उसका बयान इस तरह हुआः—मैं हाथ के दर्द से व्याकुल होकर कोठी में काम न कर सकने पर अस्पताल में भरती होगया। दिन रात हाथ के दर्द से व्याकुल रहता हूं। अस्पताल के सर्दार ने मुझ को दो डोल देकर कुएं से टंकी (लोहे का हौज़) में पानी भरने को कहा। मैंने जवाब दिया "मैं हाथों के दर्द से लाचार हूं पानी नहीं भर सकता। अगर काम करने लायक़ होता तो कोठी में ही रहता अस्पताल में क्यों आता? यह सुनकर सर्दार ने मुझे निर्दयता से पीटा मैं चिल्लाया पीछे डाक्टर साहब ने मेरे पास आकर पूछा "क्या बात है? "सरदार ने कहा "यह आदमी हुक्म नहीं सुनता, पानी नहीं भरता।" डाक्टर से मैंने कहा मेरा हाथ दुखता है इस बात को आप जानते हैं। हाथ के दर्द से मैं खाली डोल नहीं उठा सकता पानी से भरा किस तरह उठेगा। उस नरपिशाच डाक्टर ने भी मुझे ठोकर और घूंसों से मारा। घूंसे की चोट से मेरे दांत जख़्मी होगये नाक से लोहू बह कर मेरी

कमीज़ तर होगई। मैं बेहोश होकर गिर पड़ा। बेहोशी की दशा में मुझे उठा कर टट्टी की कोठरी में बन्द करके बाहर से ताला लगा दिया गया। यह घटना ४ बजे शाम की है जब मुझे होश हुआ तब मैंने अपने को टट्टी की कोठरी में बन्द पाया। मैंने जहां पर मैले का वर्तन रहता है उस द्वार से एक तख़्ता लकड़ी का उखाड़ा। उसी रास्ते से कोठरी से निकल भागा। भागकर हुज़ूर के पास आया। हुज़ूर ने ज़िला डाकृर के पास भेजा। वहां से यहां बुलाया गया हूं। मेरी इस घटना के समय बहुत आदमी देखते थे। डाकृर के डर से मेरी गवाही कोई न देगा। मेरे गवाह जो यहां आये हैं उनको भी डाकृर ने धमका दिया है। मजिस्ट्रेट ने बयान सुनकर गवाह बुलाये। मदरासी के पक्ष से विरुद्ध निकले। डाक्टर साहबके वकील ने बड़ी बहसकी। लाचार पक्ष पुष्ट न होनेसे मदरासी की हार हुई। डाक्टर साहब जीत गये। फ़ैसले में डाक्टर साहब निर्दोष ठहरे। डाक्टर साहब ने मजिस्ट्रेट साहब से अपने ख़र्चे की प्रार्थना की। दयालु मजिस्ट्रेट बोले कि जब यह आदमी मेरे पास आया था तो चोट से इसका मुंह फुट-बाल के समान फूल कर होगया था। [illegible] आप खर्च लौटाना चाहते हैं! नहीं मिलेगा। बस डॉक्टर चले गये।

मदरासी को उसका मालिक और [illegible]सियर पकड़कर काम पर ले गया। उस मदरासी का नाम [illegible]

काले रंग से घृणा

स्टीमरों पर काले रंगके कारण हम लोगों को अनेक कष्ट सहने पड़ते हैं। प्रथम तो यह कि बैठने के लिये हम लोगों को बहुत ही बुरा स्थान मिलता है। यूरोपियन लोगों का कोठरी की ओर तो जाने के लिये भी आज्ञा नहीं है। चाहे हम लोग पूरा किराया देने के लिये उद्यत हों पर हमें तो भी अच्छी जगह बैठने के लिये नहीं मिलती। एक बार मैं एगडी केपा नामक स्टीमर पर चढ़कर सूवा से लतौका को गया। मुझे जङ्गलियों के साथ बिठलाया गया जहां कि सुअर इत्यादि जानवर भी बिठलाये जाते हैं। कई कारणों से मुझे ज्वर आ गया था। रात्रि को पानी बरसने लगा और मेरे पास केवल एक कम्बल ही था मेरे कपड़े सब भीग गये थे और जाड़े के मारे मैं थर थरा रहा था। मैं ने बहुत प्रार्थना की कि मुझे एक अच्छी कोठरी मिल जावे मैं पूरा पूरा भाड़ा उसका दे दूंगा पर कुछ सुनाई न हुई। लाचार मुझे वहीं पड़ा रहना और भीगना पड़ा। यह बर्ताव मेरे जैसे अशिक्षित व अल्प शिक्षित भारतवासियों के साथही नहीं किया जाता बल्कि बड़े २ सुशिक्षित भारतवासियों के साथ भी किया जाता है। कितने ही बंदरगाहों पर तीसरे दर्जे तक के गोरे योंही निकाल दिये जाते हैं और दूसरे दर्जे वाले भारतवासियों के मौजे पाजामे इत्यादि सब कपड़े उतारे जाते हैं और (disinfect) किये जाते हैं।

फ़िजी में C.S.R. नामक एक बड़ी कम्पनी है जो खांड़ का व्यापार करती है। वह हम लोगों के गन्ने मोल लेती है। जिस मनुष्य का गन्ना वहां जाता है उसे एक रसीद दी जाती है। सप्ताह में एक दिन इस रसीद से गन्ने वालों को रुपया मिलता है। कम्पनी के गोरे अफ़सर हम लोगों के हाथों से जब रसीद लेते हैं तो पहिले दूरसे ही उसे लोहेके चीमटे से पकड़ते हैं और फिर उसे जलती हुई गंधक का धुआं देते हैं। जब उन से पूछा जाता है कि ऐसा क्यों करते हो तो यही कहते हैं कि तुम लोग काला आदमी है। तुम्हारे हाथ की छुई हुई रसीदों से हमको बीमारी होजाने का डर है इसलिये इन रसीदों का हम रोग दूर करते हैं।

एक बार मैं अपने एक मित्र के साथ एक अंग्रेज़ बैरिस्टर के कार्य्यालय में गया। वहां पर एक भारतवासी अपने इजहार लिखा रहा था। बैरिस्टर साहब ने अपनी मेम साहब से कहा कि रूमाल से अपना मुंह और नाक बन्द कर लो नहीं तो इस काले आदमी के मुंह से निकलनेवाली हवा से तुमको रोग होजावेगा। यद्यपि वह आदमी मेम साहब से बहुत दूर पर खड़ा हुआ था पर तब भी श्वेताङ्ग बैरिस्टर साहबने ऐसा कह ही दिया! पाठक! ये वेही बैरिस्टर साहब हैं जो कि हमारे भाइयों की बदौलत ही हजारों पौण्ड प्रति वर्ष कमाते हैं।

कम्पनियों के कार्य्यालय के बराण्डों तक हम लोग नहीं जाने पाते। यदि भूल से चले भी गये तो धक्का मार कर ढकेल दिये जाते हैं।

उपरोक्त प्रकार के कितने ही दुःख हमें काले रङ्ग के कारण हर रोज़ सहने पड़ते हैं। हम लोग, जो अपने को बृटिश राज्य की प्रजा समझते हैं, जब अपने घर भारतवर्ष से बाहर निकलते हैं, तो यह बर्ताव हमारे साथ किया जाता है तब हमारी आंखें खुल जाती हैं।

सौदागरों के अत्याचार

फ़िज़ी के अंग्रेज़ सौदागर हम भारतवासियों की भलाई कभी नहीं चाहते। पहिले तो कितने ही हमारे भाई पांच वर्ष तक कठिन परिश्रम करते करते ही यमलोक को चले जाते हैं और यदि कोई परमेश्वर की कृपा से पांच वर्ष तक काम करके free स्वतन्त्र होजाते हैं और खेती का काम करना चाहते हैं तो यूरोपियन सौदागर उनके कार्य में अनेक बाधायें डाल देते हैं। गन्ने की खेती में गोरों का माल १४ शिलिङ्ग फ़ी टन के हिसाब से लिया जाता है पर हम लोगों का माल चाहे वह गोरों के माल से अच्छा ही हो, ६ शिलिङ्ग फ़ी टन से से अधिक को नहीं बिकता। कितने ही भारतवासी फ़िजी में केले का व्यापार करते हैं बहुतसा केला वहां से आस्ट्रेलिया भेजा जाता है। आस्ट्रेलिया में जाकर तो हम लोग व्यापार

कर ही नहीं सकते। ये यूरोपियन सौदागर इसलिये केले के जिस सन्दूक का दाम आस्ट्रेलिया में १४ शिलिङ्ग लेते हैं, उसी को हम लोगों से २ या ३ शिलिङ्ग में ख़रीद लेते हैं। मक्का के जिस बोरे के लिये वे हमें दस शिलिङ्ग से अधिक नहीं देते उसे वे स्वयं १८ शिलिङ्ग में बेचते हैं; हम लोगों को हार कर उन्हें माल बेचना पड़ता है, न बेचें तो क्या करें?

२०० भारतवासियों को धोखा दिया गया!

फ़िजी में बाइरन साहब एक पुराना प्लैण्टर है। उसने ८०० एकड़ भूमि जङ्गलियों से पट्टे पर ली। उस भूमि में बहुत सा जंगल था साहब ने सोचा कि इस जङ्गल को यदि अपने व्यय से कटावेंगे तो १००० पौंड से कम खर्च नहीं पड़ेगा इसलिये यदि किसी तरह भोले भाले भारतवासियों को धोखा देने से काम चल जावे तो ठीक हो' यही विचार कर उसने कोई २०० भारतवासियों को बुलाया और कहा हमारे पास ८०० एकड़ भूमि है. जिसको जितनी भूमि की आवश्यकता हो, हमसे ले सकता है। इस ज़मीन को साफ़ कर लो और इसे जोता या बोया करो"। इस प्रकार चिकनी चुपड़ी बातें कह कर उसने कुल भूमि उन भारतवासियों में बांट दी और उनको एक एक काग़ज़ पर लिख दिया कि इस भूमि को तुम ५ या या १० वर्ष तक काम में लाना और एक पौण्ड फ़ी एकड़ के हिसाब से दाम देना। उन बिचारों ने बड़े परिश्रम से और

अपने पास के पौण्ड ख़र्च करके उस जङ्गल को काटकर ठीक किया और एक वर्ष उसमें खेती की। दूसरी वर्ष के प्रारम्भ होतेही बाइरन साहब ने उन सब भारतवासियों को वहां से निकाल दिया और ज़मीन छीन ली। उन बिचारों ने बहुत कुछ कहा सुनी की पर सब व्यर्थ !!

इस प्रकार के कितने ही दृष्टान्त दिये जा सकते हैं पर स्थानाभाव के कारण नहीं लिखे गये। पाठक स्थाली-पुलाक-न्याय से उनका भी अनुमान करलें।

फ़िजी के कानून से विवाह।

फ़िजी में जो आदमी अपनी स्त्रीकी मेरिजकोर्ट marriage court में रजिष्ट्री करा लेता है, वही उसका हक़दार होता है। विवाह होजाने पर मजिस्ट्रेट के सामने स्त्री और पुरुष दोनों को जाना पड़ता है, वहां पर मजिस्ट्रेट दोनों की राज़ी पूछकर उन्हें एक एक सार्टीफिकट देदेता है जो कि (Certificate of marriage) कहलाता है। रजिस्ट्री कराई ५ शिलिंग देना पड़ता है। हमारी धार्मिक रीति से जो विवाह किये जाते हैं, बिना रजिस्ट्री कराये फ़िजी के शासन नियमों के अनुसार वे ठीक नहीं समझे जाते। यदि कोई भारतवासी फ़िजी में अपनी विवाहिता स्त्री के साथ जावे और वहां जाकर विवाह की रजिस्ट्री न करावे तो उस पुरुष का धन मृत्यु के पश्चात् उस की स्त्री को नहीं मिल सकता। वह धन इमीग्रेशन दफ़्तर को

भेजा जाता है। जिन आदमियों का कोई उत्तराधिकारी नहीं होता उनका धन भी इमीग्रेशन कार्यालय को भेजा जाता है इमीग्रेशन विभागवाले उस धन को भारतवर्ष में भेजते हैं। परन्तु आरकाटी जिन लोगों को बहका कर ले जाते हैं प्रायः उनका नाम जाति और पता बिलकुल झूंठा लिखवा देते हैं। इमीग्रेशन आफ़िस से वह धन उसी पते पर भेजा जाता है। जब कुछ पता नहीं चलता तो वह धन लौट कर फ़िजी में वहीं पहुंच जाता है। इस प्रकार आरकाटियों की बदमाशी से मृत मनुष्य का धन उसके माता पिता भाई इत्यादि सम्बन्धियों को भी नहीं मिलता।

क्या हम आशा कर सकते हैं कि भारत सरकार इस प्रकार के अन्यायों को रोकने का प्रयत्न करेगी ? फ़िजी के विवाह सम्बन्धी कानून के विषय में भी फ़िजी प्रवासी भारतवासी लिखा पढ़ी कर रहेहैं परन्तु अभी तक कोई फल नहीं निकला

गोरे बैरिस्टर और वकील

यदि कोई भारतवासी गोरे बैरिस्टरों और वकीलों के पास जाता है तो वे एक गिन्नी के कामके लिये दसदस गिन्नी लेते हैं कितने ही बैरिस्टर तो यहां तक धूर्तता करते हैं कि पहिले मनमाना मिहनताना लेलेते हैं और फिर कोर्ट में आते भी नहीं। कुछ गोरे बैरिस्टर यह करते हैं कि पहिले कुछ पौण्ड लेलेते हैं और अभियोग की पेशी के एक दिन पहिले रात को

कहला भेजते हैं कि अगर हमको ५ गिनी और लाओ तो हम तुमारी पैरवी करेंगे अन्यथा नहीं। बिचारे रात को दूसरा बैरिस्टर भी नहीं कर सकते अतएव लाचार होकर ५ गिनी देनी पड़ती हैं। यदि उन से कहा जावे कि हमारे दाम वापिस देदो तो वे यही कहते हैं "हम लोग वापिस नहीं दे सकते।" भारतवासियों के कितने ही मुकद्दमे योंही खारिज हो गये हैं और गोरे बैरिस्टर ठीक समय पर नहीं पहुंचे। यदि कोई झगड़ा किसी भारतवासी और गोरे में वहां होजावे तो प्रायः गोरे बैरिस्टर यह किया करते हैं कि रुपये तो भारतवासी से पैरवी करने के लिये लेते रहते हैं और फिर अभियोग में गोरे का पक्ष लेकर गोरे को ही जिता देते हैं! पाठक ? जो हमारे भाई दस दस घंटे काम करके कठिन परिश्रम से थोड़ा बहुत कमाते हैं उसे ये गोरे बैरिस्टर छल कपटसे ठग लेते हैं बिचारे भारतवासी उनपर रुपयों के लिये नालिश भी नहीं कर सकते क्योंकि गोरे बैरिस्टर अपने श्वेताङ्ग भाई के विरुद्ध अभियोग में काम करना स्वीकार ही नहीं करते।

गोरा बैरिस्टर ११२५ पौण्ड (१६८७५ रु०) हज़म कर गया

फ़िजी की राजधानी सूवा में वर्कले नाम के एक बैरिस्टर थे। एक बार ४५ पंजाबी सिख उनके निकट गये और प्रार्थना

की "हम दक्षिण अमरीका में Argentine republic आर्जेंएटाइन प्रजातंत्र राज्य को जाना चाहते हैं, हमने सुना है कि वहां पर हमको बहुत मज़दूरी मिलेगी। परन्तु फ़िजी से कोई स्टीमर दक्षिण अमरीका को नहीं जाता। क्या करें, कैसे जावें गोरे बैरिस्टर ने मन में सोचा कि चलो ये लोग अच्छे चुंगलमें आ फंसे। फिर उन सिक्खों से बातें बना कर कहा "यदि तुममें से प्रत्येक ४ पौण्ड ज़मानत के दे, ५ पौण्ड मेरे मिहनताने के दे और १६ पौंड किराये के दे तो मैं स्टीमर तैयार कराके तुमको सीधा आर्जेंएटाइन भेज सकता हूं।" सिक्ख लोग बातों में आगये और बैरिस्टर की आज्ञानुसार पच्चीस पच्चीस पौण्ड दे दिये। इन में से केवल १६ पौण्ड की उसने रसीद दी इस प्रकार उस बैरिस्टर ने १६२५ पौंड इन लोगों के लेलिये और अपनी सब धन सम्पत्ति अपने पुत्र के नाम कर दी।

पंजाबियों ने सुप्रीम कोर्ट में नालिश की। बीसियों पौंड उनके और व्यय हुये तब कहीं डिग्री मिली, पर अब उस बैरस्टर के पास क्या था? एक कौड़ी भी वसूल न हुई। बिचारे रो पीट कर रह गये। कितने ही दीन हीन होगये और एक सिक्ख तो इसी के दुःख में मर गया!!

भारतवासी बैरिस्टर का बुलाया जाना

जब हमको इतने कष्ट सहने पड़े तो हम लोगों ने सोचा कि यदि कोई भारतवासी बैरिस्टर फ़िजी में आजावे तो ठीक

हो। गोरे बैरिस्टर लिखते कुछ हैं और हम लोगों को सुनाते कुछ और ही हैं, हमारे साथ सहानुभूति रखना तो दूर रहा, हमें घृणा की दृष्टि से देखते हैं इसलिये ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि कोई हिन्दुस्तानी बैरिस्टर यहां आकर रहे।" हम लोग श्रीमान् प्रातःस्मरणीय गान्धी जी का नाम बहुत दिनों से समाचार पत्रों में पढ़ा करते थे और उनके परोपकारी कार्य्यों के विषय में भी हम लोग थोड़ा बहुत जानते थे। अतएव हम लोगों ने एक सभा की। इस सभा के सभापति श्रीयुत रूपराम जी थे। सर्वसम्मति से निश्चय किया गया कि एक पत्र श्रीमान् गान्धी जी के पास भेजना चाहिये जिसमें कि हमारे कष्टोंका संक्षिप्त विवरण हो और जिसमें कि गान्धी जी से प्रार्थना की जावे कि वे किसी बैरिस्टर को फ़िजी में भेजने का प्रबन्धकरें पत्र लिखने का कार्य मुझे सौंपा गया, मैंने अपनी तुच्छाति-तुच्छबुद्धि अनुसार एक पत्र लिखा पत्र का सारांश यह था "हम लोग फ़िजी में गोरे बैरिस्टरों से अनेक कष्ट पा रहे हैं। ये गोरे लोग हम पर नाना प्रकार के अत्याचार करते हैं और हमारे सैकड़ों पौंड खाये जाते हैं। यहां पर एक भारतवासी बैरि-स्टर की बड़ी आवश्यकता है। श्रीमान् एक प्रसिद्ध देशभक्त हैं अतएव हमें आशा है कि आप हमारे ऊपर कृपा करके किसी भारतवासी बैरिस्टर को यहां भेजने का प्रबन्ध करेंगे। इस विदेश में आपके अतिरिक्त हमारे लिये कोई सहारा नहीं

है॥" श्रीमान् गांधी जी ने कृपाकर के पत्र के कुछ उद्धृत अंशों का अनुवाद कई समाचार पत्रों में छपवा दिया और मेरे पास एक पत्र भेजा है। पत्र की प्रतिलिपि निम्न लिखित है:—

श्रावण वदी ८ सं० १९६७

आपका खत मीला है। वहां के हींदी भाईयों का दुख की कथा सुनके मैं दुखी होता हुं। यहां से कोई बेरीस्टर को भेजने का मौका नहीं है भेजने जैसा कोई देखने भी नहीं आता है।

जो इहां पर उसका ब्यान मुझ को भेजते रहना। मैं वह बात विलायत तक पहुंचा दूंगा।

स्टीमर की तकलीफ़ का ख़्याल मुझे बराबर यहां पाता है। यह सब बातों के लिये वहां कोई ईङ्गरेजी पढ़ा हुआ स्वदेशाभीमानी आदमी होना चाहिये। कोई मेरे ख्याल में आवेगा तो मैं भेजुंगा।

आपका दूसरा खत की राह देखुंगा
मोहनदास करमचन्द गांधी का यथायोग्य पहोंचे" ॥

जिन गांधी जी ने अपने भाइयों के लिये सारा जीवन व्यतीत किया है, जिन्होंने ४०००) की मासिक आय छोड़कर भारतवासियों के दुःख मोचनार्थ कुली तक का काम किया है जो कि अपने देशबन्धुओं के लिये कई बार जेल में गये हैं, उन्हीं श्रीमान् गांधी जी का उपरियुक्त पत्र है। इस पत्र में भी

गांधी जी की महान् आत्मा और पूर्ण देशभक्ति की झलक दीख पड़ती है। गांधी जी से महापुरुष ने यह पत्र हिन्दी में लिखा है यह हिन्दी के लिये कितने गौरव की बात है इस पत्र से हिन्दी की राष्ट्रीयता भी प्रगट होती है।

किम्बहुना गांधी जी के छपाये हुये लेख को Indian opinion में श्री मणिलाल जी एम० ए० एल एल बी० बैरिस्टर एट-ला ने पढ़ा। उन दिनों वे मौरीशस में काम कर रहे थे। श्रीमान् मणिलाल जी भारतवर्ष के एक प्रसिद्ध देश भक्त हैं, कांग्रेस में आप बहुत दिनों से भाग ले रहे हैं। अपने देशके शिक्षित भाइयों के सामने मणिलाल जी का परिचय इस क्षुद्र पुस्तिका में देना वृथा है। आपने मौरीशस में बहुत कुछ कार्य किया था। आपने वहां कुली जाना बन्द करा दिया, जो भारतवासी वहां पर थे उनकी बहुत कुछ सहायता की, वहां के कानून में फेर फार कराया और कष्टदायक फ्रैञ्च नियमों से हिन्दू मुसलमानों को मुक्त करा दिया। पहिले मौरीशस में जेलखानों में हमारे भाइयों की चोटी और दाढ़ी काटी जाती थी और खाने पीने में भी बहुत गड़ बड़ होती थी। यह श्रीमान् मणिलाल जी का ही काम था कि उन्होंने इन बातों को बिलकुल बन्द करा दिया।

श्रीमान् मणिलाल जी ने गांधी जी के उक्त लेख को पढ़ कर हम लोगों से पत्रव्यवहार किया। फ़िजी में हम लोगों ने

मणिलाल जी के लिये १७२ पौराड चन्दा किया। इसमें से ७५ पौराड उन्हें स्टीमर के भाड़े को भेज दिये और शेष से उनके लिये कानून की किताबें खरीदीं और उनके रहने के लिये घर इत्यादि का प्रबन्ध किया। परन्तु कुछ दिनों बाद मणिलाल जी का हिन्दी में एक पत्र आया, उसमें उन्होंने लिखा था "हमारे सम्बन्धी हमें इस बात की सम्मति नहीं देते कि हम फ़िजी जावें। हम नैटाल जा रहे हैं वहां श्रीमान् गांधी जी से राय लेकर जैसा कुछ होगा लिखेंगे। यदि न आ सके तो आपके दाम हम वापिस कर देंगे।" जब श्री मणिलाल जी का यह पत्र हमारे हस्तगत हुआ तो हमारी आशालता मुरझाने लगी। फिर एक सभा की गई। सर्व साधारण की आज्ञानुसार मैंने पुनः एक पत्र श्रीमान् गांधी जी के पास भेजा। इतने में श्रीमान् मणिलालजी नैटाल पहुंचे। गान्धी जी ने मणिलाल जी से यही कहा कि आपने जो वचन दियाहै उसका पालन करना उचित है। मणिलाल जी फ़िजी आने को राजी हुए। स्वनामधन्य गान्धी जी ने कृपाकर एक पत्र हम लोगों को फिर भेजा, पत्रकी लिपि निम्नलिखित है:-

"आपका पत्र मीला है। मी. मणीलाल डाकर के लीये मैं तार भेजा था। उसका जवाब आपने न भेजा। इस पर से मैं समझा कि आप लोग उसकूं मुक्त करने में राजी न थे, दूसरे सबबों के लीये भी मणीलाल जी ने फीज़ीही आने का निश्चय

कीया। गत शुक्र के रोज़ ये भाई केप से नीकल चुके हैं, आप को तार भी दिया हुं। अस्टरेलीया होकर वहां पहोंचेंगे।

मेरी उमीद है आप के सब अब राजी होवेंगे और मी. मणीलाल जी की अच्छी तरह बरदास करोगे। उनका रहना खाने का बन्दोवस्त वहां के लोगों ने हाल तुरत में करना चाहिये! सब भाइयों का उत्तेजन मीलेगा तो अवश्य मी. मणीलाल जी वहां स्थायी बनेंगे।

फेर कुछ लीखना होगा तो लीखना
मोहनदास गान्धी के यथायोग्य।"

२७ अगस्त सन् १९१२ को मणीलाल जी फ़िजी की राजधानी सूवा पहुंचे हम लोगों ने उनके स्वागत का यथाशक्ति प्रबन्ध किया था। जिस दिन उनका स्वागत किया गया था उस दिन हम फ़िजी प्रवासी भारतवासियों को जो प्रसन्नता हुई थी वह अकथनीय है। सैकड़ों भारतवासी वहां एकत्रित हुये थे। उस दिन स्टीमर से सैकड़ों ही हमारे भाई दूसरी जगहों से आये हुये थे। फ़िजी के आदिमनिवासी जंगलियों को भी उस दिन बड़ी खुशी हुई। कठिन परिश्रम और दौड़ धूप के कारण बहुत से भारतवासियों के मुखपर स्वेदविन्दु झलक रहे थे। अहा! वह दृश्य कैसा रमणीय था। सड़कों पर तिल भर भी जगह नहीं थी, खचाखच आदमी भरे हुये थे। फ़िजी के दो एक अंग्रेजी पत्रों के सम्बाददाता घबड़ाये हुए इधर से

उधर घूम रहे थे। उन्हें इस बात का पता नहीं था कि यह क्या हो रहा है। मणिलाल जी उतारे गये और बंगले में ठहराये गये। तदनन्तर संध्या के समय फ़िजीनिवासी भारतवासियों की ओर से उन्हें स्वागत का अभिनन्दन-पत्र दिया गया अभिनन्दन-पत्र में उनसे यही प्रार्थना की गई थी कि आप हमारे भाइयों की गिरी हुई दशा को सुधारें और कृपा कर हम लोगों की सहायता करें। मणिलाल जी ने एक छोटा सा व्याख्यान दिया और उसमें उन्होंने कहा "मैं यथाशक्ति आप की सेवा करने का अवश्य प्रयत्न करूंगा।" अत्यन्त हर्ष की बात है कि मणिलाल जी अपनी प्रतिज्ञा को पूर्णतया पालन करने में तत्पर हैं।

इसके तीन दिन बाद जंगली लोगों ने भी मणिलाल जी का स्वागत बड़ी धूम धाम के साथ किया। कोई ६ या ७ सौ जंगली इकट्ठे हुए। उन्होंने मणिलाल जी को निमंत्रित किया और उनके स्वागत के उपलक्ष्य में जंगली पुरुषों व स्त्रियों ने खूब नृत्य और गान किया। फ़िज़ी के जंगली लोगों में यह रीति है कि जिस मनुष्य को वे सब से अधिक प्यारा समझते हैं और जिसका कि बहुत कुछ आदर सत्कार करना उन्हें अभीष्ट होता है, उसके गले में वे अपने यहां के बड़े सरदार की लड़की के हाथ से माला पहिनवाते हैं। यहां यह कहना बाहुल्यमात्र है कि मणिलाल जी को भी यह माला पहिनाई

गई थी। हम लोगों को जंगली लोगों के इस उत्साह को देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ। कितने ही जंगली अपनी भाषा में कह रहे थे "आज हमारे लिये बड़े हर्ष की बात है कि हमें एक ऐसे पढ़े लिखे भारतवासी के स्वागत करने का सौभाग्य हमारे मित्र पंडित तोताराम के द्वारा प्राप्त हुआ। जबसे फ़िजी देश बसा है तब से आज तक कोई इतना सुशिक्षित भारत-वासी यहां नहीं आया। आप ऐसे सुशिक्षितों की यहां अत्यंत आवश्यकता है इस देश में आपको और आपके भाइयों को ईश्वर चिरायु करे। आप हम लोगों को भी अपने भाइयों की तरह समझना।" तत्पश्चात मि. मणिलाल जी ने भी एक मनोहर वक्तृता दी। मि. साम मुस्तफ़ाने फीज़ीयन्स की भाषा का तर्जुमा अंगरेज़ी में करके मि० मणिलाल जी को समझाया फिर संध्या को वहां से विदा होकर मेरे यहां भोजन हुआ। प्रातः होते ही तुरुलुलु थाने के पास महाजन अलगू से मिलने को गये वहां पहुंचते ही उन्होंने मारे खुशी के धूर गोलों में आग लगा दी आवाज़ होते ही मजिस्ट्रेट ने हुक्म दिया कि बन्द करो नहीं तो सम्मन मिलेगा। संध्या के तीन बजे मणि-लाल जी श्रीमान् बाबू रामसिंहकी लंच पर सवार होकर सूवा को चले गये।

फ़िजी द्वीप

फ़िजी का इतिहास—फ़िजी के प्राचीन इतिहास

के विषय में हम बहुत कम जानते हैं । बहुत कुछ अनुसन्धान करने पर भी इस विषय में कोई निश्चित बात ज्ञात नहीं हुई । इसका कारण यहीहै कि मिश्नरियों के जानेके पहिले फ़िज़ीवाले लिखना पढ़ना नहीं चाहते थे । इतिहास के अन्वेषकों का मत है कि ये लोग न्यू गायना से आकर यहां पर बसे; पर यह बात निराधार सी है । इस विषय में अद्यपर्य्यन्त कोई विश्वसनीय प्रमाण नहीं मिला । हां पोलीनीशियन लोगों की भाषा में और इन लोगों की भाषा में थोड़ी सी समानता पाई जाती है, पर अभी तक इस बात का कोई प्रमाण नहीं मिला कि पोलीनीशियन लोग कब और कैसे फ़िजी में आये सन् १६४३ ई० में Tasman नामक एक डच ने इसे आविष्कृत किया था । जैसा कि हम पहिले लिख चुके हैं, यह द्वीप सन् १८७६ ईसवी में ब्रिटिश सरकार के हाथ में आया । रतूमा नामक द्वीप इसमें सन् १८७९ में मिला दिया ।

जन संख्या—सन् १९११ ई० की द्वितीय अप्रैल को जो मर्दुमशुमारी हुई थी उससे ज्ञात हुआ कि फ़िजी की जन संख्या १३९५४१ है ।

नाम जाति	पुरुष	स्त्री	योग
यूरोपियन और दूसरे गोरे	२४०३	१३०४	३७०७
Half caste (वर्णसंकर व अधगोरे)	१२१७	११८४	२४०१
भारतवासी	२६०७३	१४२१३	४०२८६

नाम जाति	पुरुष	स्त्री	योग
पोलीनीशियन	२४२९	३२९	२७५८
फ़िज़ी के आदिम निवासी	४६११०	४०९८६	८७०९६
चीन निवासी	२७६	२९	३०५
रोतूमन	१०४३	११३३	२१७६
मिश्रित	४५७	३५५	८१२
	८०००८	५९५३३	१३९५४१

जल वायु—फ़िज़ी की आबहवा बहुत अच्छी है। भूमध्य रेखा के निकट के देशों में इतना अच्छा जल वायु बहुत कम पाया जाता है। मलेरिया का तो फ़िज़ी में अभाव ही है। इसके अतिरिक्त और भी कितने ही प्रकार के ज्वरों औ रोगों का वहां नाम निशान भी नहीं। फ़िज़ी के दक्षिण पूर्व के कोने से जो ट्रेडविंड चलती है उस से फ़िज़ी की गर्मी शान्त हो जाती है। फ़िज़ी में हैज़ा और प्लेग कभी नहीं फैलते। मच्छर फ़िज़ी में बहुत हैं परन्तु मलेरिया उनसे पैदा नहीं होता। चीता, सिंह, सांप, बिच्छू इत्यादि फ़िज़ी में बिलकुल नहीं पाये जाते। परन्तु मक्खियां फ़िज़ी में बहुत ज़्यादह होती हैं। इतनी ज़्यादा कि उनके मारे नाक में दम होजाता है। फ़िज़ी की राजधानी सूवा में लगभग १०७ इञ्च पानी प्रतिवर्ष बरसता है। फ़िज़ी में अकाल का विशेष डर नहीं

क्योंकि थोड़ा बहुत पानी वहां हर महीने में बरसा ही करता है। परन्तु आंधीवहां बड़े ज़ोर की आती है, इस कारण खेत को बड़ी हानि पहुंचती है, और केलों की खेती के लिये तो ये आंधियां बहुत ही हानिकारक होतीं हैं।

फ़िजी के आदिम निवासी

पहिले फ़िज़ी के आदिम निवासी बड़े असभ्य थे, परन्तु जब से फ़िज़ी ब्रिटिश अधिकार में आया है तब से ये लोग बहुत कुछ सभ्य बन गये हैं। पहिले इन लोगों में बड़ी बड़ी कुरीतियां प्रचलित थीं परंतु अब वे क्रमशः नष्ट होगई हैं। कोई २५० वर्ष पहिले इन लोगों में यह रीति थी कि जब कोई जंगली बहुत बृद्ध हो जाता था तो कुछ जङ्गली युवक मिल-कर उसके पास जाते थे और कहते थे "कोई को सिङ्गनी बीआ बीऊ ना बूरा बूरा" अर्थात् "क्या तुम संसार को नहीं छोड़ना चाहते?" जब वह कुछ उत्तर नहीं देता था तो उसको भून कर खा जाते थे।

बिवाह की रीति जो पहिले इन लोगों में प्रचलित थी वह भी बड़ी अद्भुत थी। एक गांव का जङ्गली जा कर दूसरे गांव की किसी कन्या को भगाकर अपने घर ले आता था। तब फिर उस लड़की के गांववाले उस आदमी पर धावा करते थे। इधर लड़के की तरफ़ भी कितने ही आदमी लड़ने को तय्यार रहते थे। फिर खूब दोनों ओर से लड़ाई होती थी।

यदि वरपक्ष वाले जीतते तो उस लड़की का विवाह पुरुष से करदिया जाता था और लड़की वाले विजयी होते तो लड़की अपने गांव को लौट जाती थी और उसका विवाह किसी दूसरे के साथ कर दिया जाता था। पति के शव के साथ पहिले जङ्गली लोगों की स्त्रियां भी जीवित ही गाड़ दी जाती थीं। जब किसी मनष्य का मित्र मर जाता था तो वह अपने बायें हाथ की सब से छोटी अंगुली काट कर उसके साथ गाड़ देता था। परन्तु अब ये कुरीतियां बहुत कम हो गई हैं क्योंकि अधिकांश जंगली ईसाई हो गये हैं। विवाहकी वह रीति अब नहीं रही है। कन्याएं अपने आप वर को चुन लेती हैं। उनके माता पिता उनके इस कार्य में हस्तक्षेप नहीं करते। जंगलियों में १६ वर्ष से कम/ की कन्याओं और २५ वर्ष से कम के पुरुषों का विवाह नहीं होता। यद्यपि उंगली गाड़ने की प्रथा अब बन्द हो गई है पर तब भी दब छिप कर थोड़े बहुत आदमी अपनी उंगली काटकर गाड़ देते हैं। मैंने कितने ही आदमी ऐसे देखे हैं जिनकी अंगुलीं कटी हुई हैं। अपने मित्र व भाई मृतक के साथ अंगुली काट कर गाड़ देने को ये लोग "मांतेबाता" यानी मित्रके प्रेमके वश उसके साथ मरने का परिचय देते थे। पाठक! देखिये ये असभ्य जाति के जंगली अपने मित्र के मरने पर प्रेमपद को कैसा पूरा करते थे।

एक ये जंगली लोग हैं जो परस्पर इतनी मित्रता रखते हैं और एक हम हैं जो आपस में कटे मरते हैं। हा भारत! तेरी सन्तान जंगलियों से भी गई बीती है!!

जंगली लोग नित्यप्रति के कार्यों में चाहे विदेशी वस्त्र व्यवहार करें पर जब उनके यहां कोई त्यौहार होता है तो वे सदा अपने हाथ की बनाई हुई चीजों को ही काम में लाते हैं। हम लोगों को जो कि विवाह इत्यादि के अवसर पर सैकड़ों रुपये विदेशी वस्तुओं के खरीदने में व्यय कर देते हैं, जंगलियों से यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। जंगली लोगों में जब पुत्र उत्पन्न होता है तो जंगली स्त्रियां तीन रात तक जागरण करती हैं और रात को घर में दीपावली की तरह खूब उजाला करती हैं। जब पहिले पहिल फ़िजी आविष्कृत हुआ था तब ये लोग इतने असभ्य और मूर्ख थे कि इन्होंने दियासलाई की एक एक डिबिया के लिये पचास २ एकड़ भूमि दे दी थी। पर अब वे बहुत कुछ बुद्धिमान होगये हैं। अधिकांस जंगली ईसाई हो गये हैं। जंगलियों के लिये गांव गांव में ईसाईयों के स्कूल हैं जहां कि जंगली भाषा पढ़ाई जाती है। सब जंगली मांसभक्षी हैं। तीर कमान और बरछा, ये ही उनके हथियार हैं। घूंसा मारने में वे बड़े निपुण हैं। जंगली सूअरों को भी घूंसों से मार डालते हैं।

जंगलियों का गिरमिट—हमारे भाई बहिनों

पर जो अत्याचार फ़िजी में होते हैं उनका वर्णन किया जा चुका है। पर ये अत्याचार लोगों पर नहीं होने पाते। पहिले तो फ़िज़ियन लोग शर्तबन्दी करके काम करते ही नहीं और यदि गिरमिट (agreement) में काम करते भी हैं तो अपनी सुविधा के लिये नौकर रखनेवालों से कितनीही शर्तें लिखवा लेते हैं। जब कोई जंगली गिरमिट में काम करता है तो वह पहिले लिखा लेताहै कि दिन भर में तीन बेर भोजन देना होगा, ६ महीने बाद कपड़े देने होंगे और साबुन, तमाखू, मिट्टी का तेल और कम्बल इत्यादि देने पड़ेंगे। जब तक इस बात को लिखा कर रजिस्ट्री नहीं करा लेता तब तक कोई भी जंगली काम करने को कदापि राज़ी नहीं होता।

'COLONY OE FIJI' में एक यूरोपियन ने लिखा है:—

The native Fijian does not make a reliable plantation labourer, his natural temperament rendering him quite unfitted for the monotonous duties incidental to cane cultivation, but the Indian coolies have proved themselves eminently suitable for the work and are employed by the planters generally.

अर्थात् "फ़िजी के असली निवासी मज़दूरी का काम अच्छी तरह नहीं कर सकते उनका स्वभाव ही इस कार्य के लिये सर्वथा अयोग्य है। गन्ने की खेती में वही काम बार बार रोज़ करना पड़ता है (जिसे कि करते करते जी उकता जाता

है)। परन्तु भारतवासी कुली इस कार्य के लिये सर्वथा योग्य हैं और प्लैण्टर लोग प्रायः उन्हीं से काम लेते हैं। ”

बहुत ठीक ! फ़िजी के असली बाशिन्दों को कौन नौकर रक्खेगा ? पहिले तो उनके नौकर रखनेमें ख़र्च ही बहुत पड़ता है और फिर गोरे लोग उन पर अत्याचार नहीं कर सकते। यह तो भारतवासी कुली ही हैं जिनके घूंसे मारो, पीटो,ठोकरें लगाओ, जिन्हें तनख्वाह मत दो, क़ैदखाने में भेज दो, कोई सुनने वाला ही नहीं !!

निष्पक्षलेखक हो तो ऐसा हो ! फ़िजी के आदिमनिवासी इस कार्यके योग्य नहीं हैं। क्यों ? इसलिये कि उनका स्वभाव ही इस कार्य के लिये अयोग्य है !!

पाठक गण ! अब आप एक जंगली मज़दूर और भारतवासी की तुलना कीजिये। हम लोगों को वहां प्रति सप्ताह में ५ शिलिंग ६ पैंस मिलते हैं सो भी कब ! जब पूरा काम करें तब और सौ आदमियोंमें ५ से अधिक पूरा काम कभी भी नहीं कर सकते। परंतु तब भी हमें देखना है कि एक असाधारण परिश्रमी भारतवासी कुली, हर प्रकार के अत्याचार सहते हुये अधिकसे अधिक कितना कमा सकता है। प्रति सप्ताहके ५ शिलिङ्ग ६ पैन्स के हिसाब से एम महीने के १ पौण्ड दो शिलिङ्ग और एक वर्ष के १३ पौण्ड ४ शिलिङ्ग हुये। इसमें ८ पौण्ड तो सूखे खाने में ही व्यय हो जाते हैं। सेर भर आटा और पावभर

दाल के हिसाब से ९ मन आटा और २। मन दाल हुई। फिजी में आटा चार आना सेर दाल ६ आना सेर और मसाला हल्दी, मिर्च इत्यादि १२ आना का एक पौण्ड—आध सेर मिलता है। इस प्रकार कम से कम नौ पौण्ड तो खाने में व्यय होंगे और सालभर में एक दो पौण्ड जुर्माना हो जाना कोई बड़ी बात नहीं अथवा दस बीस दिन की कैद ही हो जाना एक बिलकुल साधारण बात है; इसलिये इसका भी एक पौण्ड निकाल डालिये और कम से कम १॥ पौण्ड ऊपरी खर्च के लिये रख लीजिये। इस प्रकार कुल मिलाकर ११॥ पौण्ड हुये। इस पर भी अभी कपड़े लत्ते, तेल, लकड़ी, त्यौहार इत्यादि सबके सब बाकी हैं। किम्बहुना १ पौण्ड से अधिक कभी भी नहीं बच सकता। परन्तु जंगलियों को सूखे ९ पौण्ड बचते हैं क्योंकि उनका खाना, पीना, कपड़ा, लत्ता, तेल, साबुन सब प्लैन्टरों के जिम्मे होता है और साल भर में ९ पौण्ड मिलते हैं।

जंगली लोग पूंछ तांछ करके और सब प्रकार की सुविधाजनक शर्तें लिखा कर तब कहीं रजिस्ट्री करते हैं और हमारे यहां आरकाटी बहका कर मजिस्ट्रेट के पास ले जाता है। मजिस्ट्रेट पूछता है 'फिजी जाने को राजी हो' ? जहां मुंह में से ' हां' निकली कि रजिस्टी हो गई। रजिस्ट्री क्या हुई केवल हां के कहने से ५ वर्ष का कालापानी होगया !

जंगलियों की भाषा—पहिले जंगलियों में लिखने की कोई भाषा नहीं थी। परन्तु जब से ईसाई लोग वहां पहुंचे हैं तब से वहां के लोग रोमन में अपनी बातों को लिखते हैं और पढ़ते हैं। जंगली लोगों के नाम भी बड़े बेढब होते हैं जैसे माचू, इयोम्बी, लैबानी, साबे नादा, रातूइरोनी, रूयौ इत्यादि। जंगली भाषा के दो चार शब्द भी सुन लीजिये।

तेनाना	=	मां
तमाना	=	बाप
तोकाना	=	बड़ा भाई
तादीना	=	छोटा भाई
वतीना	=	पत्नी
कलौ	=	ईश्वर

फ़िजी प्रवासी भारतवासियों के जीवनपर एक दृष्टि

फ़िजी में ४०००० से अधिक हिन्दुस्तानी हैं। इनमें ३५ फ़ीसदी स्त्री हैं और ५५ फ़ीसदी पुरुष। जब मैंने घूम घूमकर वहां की भारतीय स्त्रियों से फ़िजी के आने के विषय में पूछा तो कुछ स्त्रियों ने कहा "हमारे निर्धन पति को आरकाटी ने बहका दिया, इसलिये हमें भी अपने पति के साथ यहां आना पड़ा" बहुत सी स्त्रियों ने कहा "हमारे सास, ससुर, पति

इत्यादि मर गये तो निकट के कुटुम्बी लोगोंने कुछ मदद नहीं की इसलिये हम तीर्थ भ्रमण करन को चली गई और वहां से हमें आरकाटी बहका कर ले आये"। कुछ स्त्रियों न यह भी कहा "पति के मरने पर जब हम विधवा हुई तो घरके लोग हम से लड़ने झगड़ने लगे और हमें कष्ट देने लगे । इन्हीं दुखों से हम घर से निकल गई, बीच में दुर्भाग्यवशात् आरकाटियों के फन्दे में पड़ गई और अन्त में हमें अनन्त कष्ट सहने के लिये यहां आना पड़ा।

उपरियुक्त बातों से प्रकट होता है कि गृह-सम्बन्धी लड़ाई झगड़ों से और विधवाओं के साथ समुचित वर्ताव न करने से, वहुत सी स्त्रियों को द्वीप द्वीपान्तरों में जाकर अनेक कष्ट भोगने पड़ते हैं। ये स्त्रियां बिलकुल भोली भाली होती हैं। और प्रायः अशिक्षिता होती हैं इसी कारण वे आरकाटियों के फंदे में और भी जल्दी फंस जाती हैं। पता लगाने से ज्ञात हुआ कि रेवा और नावुआ ज़िले की ५०० स्त्रियों में कुल तीन या चार पढ़ लिख सकती थीं। यद्यपि पुरुषों को भी फ़िजी में अनेक कष्ट सहने पड़ते हैं पर स्त्रियों को उनसे भी अधिक दुख उठाने पड़ते हैं। पहिले तो उन्हें ३॥ बजे प्रातःकाल में में उठना पड़ता है और रोटी बनानी होती है। तत्पश्चात् १० घंटे खेत पर कठिन परिश्रम करना पड़ता है तदनन्तर फिर घर लौटकर रोटी करनी होती है। जब स्त्रियां काम पर से

लौटती हैं तब उनके मुंह पर मुर्दनी सी छा जाती है । उस समय उनके मुखकी मलीनता को देखकर जो दुख होता है वह वर्णनातीत है। जो स्त्रियां भारतवर्ष में कभी अपने गांव से बाहर नहीं गई थीं, जो स्त्रियां इतना भी नहीं जानतीं थीं कि हमारे ज़िले के बाहर कोई देश है भी या नहीं, जो स्त्रियां स्वभावतः नम्र और सुकुमारि थी, जिन्होंने कि घर पर कभी कड़ा काम नहीं किया था, वेही स्त्रियां आज हज़ारों कोस दूर फ़िजी, जमैका, क्यूबा, होन्डूरास, गायना इत्यादि में जाकर दस दस घण्टे कठिन परिश्रम करती हैं। कितनी ही बालविधवायें बहकाई जाकर फ़िजी में भेज दी गई हैं, उनके दुखों की कहानी सुनकर कड़े से कड़ा हृदय भी पसीज सकता है। जिस समय वे नीचा मुख करके अश्रुधारा बहाती हुईं अपने दुख की कहानी सुनाती हैं उस समय अपनी आंखों से आंसुओं को रोकना सुनने वालों के लिये असम्भव है।

गोरे ओवरसियरों के कारण हमारी भगनियों को जो जो दुःख वहां उठाने पड़ते हैं वे अवर्णनीय हैं। भारतवासी स्त्रियों के कष्टों को देखकर फ़िजी के जंगली लोग अपनी भाषा में हम से कहा करते थे 'सादा वकलेवू न वान्डआ इन्दिआ, साङ्गई लाको माई, न या लेवा वू लांगी माई बीती साती को दा ई के सा तुतुका वेसिङ्गा वेसिङ्गा न ओवासिआ सा दा न काई इण्डिया न मरा मा साला को माई वीती वनुआ

बूलांगी कैवक दुआ न आता माता सा न कीता का वाता नई लैवा नकीतौ वक मतीआ सारा को का या ”

इस जंगली भाषा के वाक्य का अर्थ यह है कि “इण्डिया बहुत बुरा देश है जहां की स्त्रियां मज़दूरी करने के लिये परदेश में फ़िजी को आती हैं और यहां आकर अनेक अत्याचार सहती हैं। जैसे अत्याचार तुम्हारी इण्डियन स्त्रियों पर किये जाते हैं वैसे यदि हमारी स्त्रियों पर किये जावें तो करनेवालों को हम जड़ से मिटा देवें”।

क्या जंगलियों की यह बात अक्षरशः सत्य नहीं है ? क्या हमारे लिये यह लज्जा की बात नहीं है कि हमारी भगनियों, माताओं और कन्याओं पर सात समुद्र पार ये अत्याचार किये जावें ? क्या हम में अब आत्माभिमान और आत्म-रक्षा का लेश भी नहीं रहा ? जब हम लोग जंगलियों के सामने अपने देश की बड़ाई करते थे तो वे फ़ौरन यही कहते थे “तुम्हारा देश कुछ काम का नहीं , ख़बरदार अपने बुरे मजूरा देश की बड़ाई हमारे सामने फिर कभी न करना।” जंगलियों की यह बात सुनकर हमें निरुत्तर होना पड़ता था।

देश लौटने में जाति का भय—कितनेही स्त्री और पुरुष अपने गिरमिटको पूरा करके और ५ वर्ष और रह कर अपनी मातृभूमि को लौटना चाहते हैं तो वे इस विचार

से नहीं लौटते कि वहां पहुंच कर कोई हमें जाति में तो मिलावेगा नहीं, आत्मापमान वहां और सहना पड़ेगा, इसलिये मृत्यु पर्यन्त उन्हें वहीं कष्ट उठाने पड़ते हैं। हमारे देश के भाई समुद्रयात्रा की दफ़ा लगाकर टापुओं से लौटे हुए अपने भाइयों को जाति से च्युत करके उनको इतना कष्ट देते हैं कि जिससे दुःखित होकर वह फिर टापुओं को लौट कर चले जाते हैं और उनके धन को जो कि उन्होंने परदेश में जाकर मारपीट सहकर, अनेक अपमान सहकर, आधे पेट खा २ कर कौड़ी २ मुशकिल से जमा किया है, कुछ तो भाई बन्धु ले लेते हैं और कुछ टकार्थी पुरोहित जी प्रायश्चित कराने में बेदर्द होकर खर्च करवा डालते हैं। अपने देश बन्धुओं को मैं इस का एक उदाहरण देता हूं। मेरे घर के पास फ़िजी टापू में एक गुलजारी नाम का कान्यकुब्ज ब्राह्मण रहता था। उसने बड़े परिश्रम से ८ वर्ष में लगभग ३००) रुपये इकट्ठे किये। इसको ब्राह्मण जानकर सब लोग प्रायः महीने की पूर्णमासी को सीधा दे दिया करते थे। भारतवर्ष में कन्नौज के रहने वाले थे इनके घर से इनके भाई ने पत्र भेजा उसमें लिखा था कि तुम चले आओ। इस साल में तुम देश को नहीं आओगे तो तुम को १०१ गौ मारे की हत्या होगी। गुलजारी लाल ने भाई की लिखित ऐसी शपथ जब देखी तब ब्राह्मण-धर्म सोचकर वे देश को चले आये। चलते समय इनको लोगों ने कुछ और

दक्षिणा दी। जब ये अपने घर आये तो दूसरे घर में ठहराये गये। रुपया पैसा सब भाई को सौंप दिया। तीन चार दिन बाद पुरोहित जी बुलाये गये। ये महाशय कानून की पुस्तक साथ ले कर आये। गांव के बड़े बूढ़े सब मिलकर बैठे। समुद्र यात्रा पर विचार हुआ। गुलज़ारी ने घर से निकलने से लेकर फ़िजी में पहुंचने तक जहाज़ का खाना पीना बयान किया। फ़ैसले में सब तीर्थ बतलाये गये। भागवत सुनने को बतलाई गई। लगभग ५ या ६ गांव का भोज बतलाया। कोई ७०० सौ या आठ सौ के लगभग ख़र्च करने का फ़ैसला दिया गया। गुलजारी ने खर्च करने के लिये भाई से अपने दिये हुए रुपये मांगे। भाई ने कोरा जवाब दिया। जातिवालों ने अलग कर दिया। गुलजारी के साथ गांववाले बड़ी घृणा करने लगे। भाई लोग कट्टर शत्रु होगये। बोले कि तुमने कुछ हम लोगों से रुपया छिपा लिया है वही ख़र्च करो। यह रुपया हम न देंगे। लाचार गुलजारी ने फ़िजी में अपने इष्ट मित्रों को कष्ट कहानी की चिट्ठी भेजी और लिखा कि कसाई के हाथ से गाय छुड़ाने के समान मुझे बचाकर पुण्य के भागी हो। वहां से चन्दा कर के ६००) रुपया लोगों ने भेजा तब कुलज़ारी अप्रैल सन् १९१४ ई० में फिर फ़िजी पहुंचे। इसी तरह कितने ही लोग लौटकर फ़िजी गये हैं। और जाकर ईसाई और मुसलमान भी होगये हैं। समुद्रयात्रा की दफ़ा में मुजरिम होकर

बहुतेरे हमारे भाई मातृभूमि को अन्तिम नमस्कार करके चले गये हैं और वहां पहुंचकर सनातन धर्म की जय बोलकर मसीह की रूलको पकड़ लिया है। पाठक ! जरा विचारिये क्या आप रामायण पढ़ते हैं ? क्या आपने भरत के प्रेम की शिक्षा को ग्रहण किया है ? क्या आप भाईसे प्रेम करना जानते हैं ? हम भारतधर्म महामंडल के सञ्चालकों से सविनय प्रश्न करते हैं कि आपने इन प्रवासी भाइयों के लिये क्या उपाय सोचा है आप इनको क्या आज्ञा देते हैं। ये लोग क़ुर्बानी में भाग लें या ईसाईयों में ? या आप पुचकार कर इन्हें अपनी छाती से लगावेंगे ?

क्या हम अपने देश के व्याख्यानदाताओं और धार्मिक पुरुषों से पूछ सकते हैं कि इन लोगों को पुनः जाति में मिला लेने में क्या हानि है ? जो मनुष्य घर के अत्याचारों से पीड़ित होकर और दुष्ट आरकाटियों द्वारा बहकाये जाकर विदेश में भेज दिये गये हैं, उस में उन विचारों का क्या दोष है ?

शिक्षा की दशा—फ़िजी में मिशनरियों के स्कूल हैं पर ऐसे स्कूलों में लड़कों को पढ़ाना मानो ईसाई बनाना है। इसलिये आवश्यकता इस बात की है कि कुछ हिन्दी पढ़े लिखे और अंग्रेज़ी जाननेवाले आदमी भारतवर्ष से जावें और स्कूल खोलकर अपने भाइयों को शिक्षित बनावें। थोड़े बहुत हमारे भाई वहां समाचारपत्र पढ़ सकते हैं यह

अच्छी बात है। भारतवर्ष से कितने ही समाचार पत्र और पत्रिकायें वहां जाया करती हैं यथा—सरस्वती, चित्रमय-जगत्, मर्यादा, भास्कर, भारतमित्र, अभ्युदय, आर्यमित्र, भारत सुदशा प्रवर्त्तक, वीरभारत, वेङ्कटेश्वर इत्यादि। जो आदमी पढ़ सकते हैं वे अपने निरक्षर भाइयों को मातृभूमि भारत के समाचार सुनाया करते हैं भारतमित्र को वहां के भारतवासी बड़े चाव के साथ पढ़ते हैं और वास्तव में फ़िजी वासियों के लिये भारतमित्र ने बहुत काम किया है। आशा है कि हमारे अन्य समाचारपत्र भी प्रशंसनीय भारतमित्र का अनुकरण करेंगे और अपने प्रवासी भाइयों की सहायतार्थ थोड़ा बहुत लिखा करेंगे।

धार्मिक स्थिति—जो पण्डित या मौलवी फ़िजी में जाते हैं वे पहिले तो स्वयं कुछ पढ़े लिखे ही नहीं होते और फिर उनका उद्देश्य यही होता है कि अपने भोले भाइयों से रुपया ठग कर अपने घर लौट आवें। ऐसे स्वार्थी मनुष्य फ़िजी प्रवासी भारतीय भाइयों का कुछ उपकार नहीं कर सकते।

एक बार हम लोगों ने एक प्रार्थना-पत्र फ़िजी के गवर्नर के पास इस आशय का भेजा था कि यदि भारतवर्ष से कोई अच्छा उपदेशक फ़िजी में बुला लिया जावे तो बहुत लाभ हो। उस के आने जाने का व्यय Immigration विभाग दे और उसके

भोजन इत्यादि का प्रबन्ध हम लोग करेंगे। गवर्नर के यहां से यह प्रस्ताव स्वीकृत होकर भारतवर्ष को आया परन्तु खेदकी बात है कि यहां से कोई जाने को राजी न हुआ। भारतधर्म्म महामण्डल का यह कर्त्तव्य है कि अपना एक अच्छा उपदेशक फ़िजी को भेजे परन्तु जो लोग समुद्रयात्रा को पाप समझते हैं वे प्रवासी भारतवासियों के दुःख मोचनार्थ वहां कैसे जा सकते हैं ? राममनोहरानन्द सरस्वती नामक एक आर्यसमाजी सज्जन वहां गये हुये हैं और उन्हों ने वहां प्रचार का काम भी किया है, अतएव वे धन्यवाद के पात्रहैं। पर वहां एक ऐसे उपदेशक की अत्यन्त आवश्यकता है जो कि वैदिक सिद्धान्तों का अच्छा ज्ञाता हो और अच्छी तरह अंग्रेज़ी भी जानता हो। धर्म्म का प्रचार करना बड़ी टेढ़ी खीर है, इसके लिये सैकड़ों कष्ट सहने पड़ते हैं और इस कार्य्य में बड़े साहस, आत्मिक बल, शारीरिक बल, धैर्य्य और सहिष्णुता की आवश्यकता है हम यह बात जानते हैं कि आर्यसमाज के ऊपर बहुत बोझ रक्खा हुआ है और आर्यसमाज बहुत कार्य कर रहा है, परन्तु संसार के उपकार का दम भरनेवाला आर्यसमाज अपने प्रवासी भाइयों के लाभार्थ क्या एक उपदेशक भी फ़िजी को नहीं भेज सकता ? हमें पूर्ण आशा है कि कि फ़िजी के हिन्दू लोग यहां से भेजे हुये उपदेशकों की यथाशक्तिसहायता करेंगे। हम लोगों ने वहां दोचार जगहों में

प्रतिवर्ष रामलीला करने का भी प्रबन्ध किया था। अब भी लम्बासा, नाधुआ, लतौका इत्यादि कई स्थानों में हर साल रामलीला हुआ करती है। इससे लाभ यह होता है कि हमारे भाइयों के हृदय में अपने जातीय उत्सवों की ओर प्रेम बना रहता है।

फ़िजी में ईसाई लोग कितने ही वर्षों से बराबर अपना कार्य कर रहे हैं परन्तु बहुत प्रयत्न करने पर भी उन्हों ने बहुत कम हिन्दू ईसाई बनाये हैं इस का कारण यह कि हम लोग बराबर यही प्रयत्न करते रहे हैं कि हमारे भाई ईसाई न होने पावें और यदि इतने पर भी वे ईसाई हो जाते थे तो हम लोग उन्हें शुद्ध कर लेते थे। फ़िजी में बहुतसे कबीरपंथी रामानन्दी, सतनामी, गुसाईं इत्यादि कितने ही प्रकार के साधू हैं परन्तु ये लोग अपने २ चेले करते फिरते हैं। कितने ही साधू बहका कर के फ़िजी में भेज दिये गये हैं। ५ वर्ष गिरमिटमें काम करके जब ये लोग स्वतंत्र हो जाते हैं तो भीख-मांगना प्रारंभ कर देते हैं। सालभर में एक २ वार अपने चेलों के पास चक्कर लगाना बस यही उन का काम है। इसी लिये हम कहते हैं कि एक अच्छा उपदेशक फ़िजी में पहुंच जावे तो बहुत लाभ हो!

कुछ वर्षों से फ़िजी में स्त्रियों के पुनर्विवाह भी होने लगे हैं। बात असली यह है कि पहिले तो फ़िज़ी में मर्दों की

संख्या स्त्रियों की संख्या से लगभग दूनी है और फिर इन स्त्रियों में कितनेही बाल विधवायें हैं जो बहकाई जाकर भेज दी गई हैं ऐसी दशा में व्यभिचार होना स्वाभाविक ही है। फ़िज़ी में ऐसे कितने ही अभियोग हुआ करते हैं जिनमें कि पुरुष ने अपनी स्त्री को दुराचार के कारण मार डाला है और वह स्वयं फांसी पर चढ़गया है। इसमें दोष किसी का नहीं है, असली दोष है इस 'Indenture system' यानी कुली-प्रथा का। ऐसी बुरी और पतित दशा में रहते हुए भी फ़िज़ी का भारतीय समाज बहुत नहीं बिगड़ा, यह बात वास्तव में आश्चर्यजनक है। जब फ़िज़ी निवासियों ने देखा कि दब छिपकर बहुत व्यभिचार होता है तो उन्होंने यह उत्तमतर समझा कि पुनर्विवावाह की प्रथा जारी करदी जावे।

पुनर्विवाह शास्त्रसम्मत है या नहीं इस विषय में कहना मेरे लिए अनधिकार चेष्टा होगी पर इतना अवश्य कहे बिना मैं नहीं रह सकता कि फ़िज़ी में व्यभिचार को रोकने में पुनर्विवाह ने थोड़ी बहुत सहायता अवश्य दी है।

आर्थिकस्थिति—फ़िज़ी प्रवासी भारतीय लोगों की आर्थिक स्थिति ख़राब है। ५ वर्ष के बाद स्वतन्त्र हो कर थोड़े बहुत आदमी खेती करलेते हैं परन्तु धान की खेती के अतिरिक्त और किसी में लाभ होने की सम्भावना नहीं है।

खाद्य पदार्थों की तेज़ी के कारण कुछ लोग भूखों भी मरते हैं। अगर वहां धान न पैदा होता तो और भी कितने ही आदमी भूखों मरने लगते। सैकड़ा पीछे एक दो आदमी ऐसे हैं जो अपना व्यापार करते हैं हम पहिले कह चुके हैं कि Full task करनेपर एक शिलिङ्ग मजदूरीमिलती है। परन्तु पूरा काम करनेवाले १०० में पांच निकलेंगे, क्योंकि पूरे काम की कोई हद मुकर्रर नहीं है; वैसे तो २० जरीब लम्बे और ६ फ़ीट चौड़े खेत का काम Full task कहलाता है परन्तु यदि कोई आदमी इस कठिन कार्य्य को एक दिन में कर लेता है तो दूसरे दिन ही फुल टास्क २५ जरीब लम्बाई ६ फीट चौड़ाई का होजाता है। साधारण मनुष्य १२ शिलिङ्ग यानी नौ रुपये से अधिक एक महीने में नहीं कमा सकते। फ़िज़ी में गेहूं का आटा एक शिलिङ्ग का ६ पौण्ड, चावल ४ पौण्ड, दाल अरहर की ४ पौण्ड के हिसाब से मिलते हैं। सारांश यह कि भारतवर्ष की अपेक्षा वहां दूना खर्च पड़ता है। कुछ लोगों का ख्याल है कि इन द्वीपों में जा कर आदमी बहुत कुछ रुपया कमा कर ला सकता है। परन्तु उनका यह वृत्तान्त भ्रममूलक है। यह हम मानते हैं कि इन द्वीपों से जो सैकड़ों आदमी भारतवर्ष लौटते हैं उनमें से दो चार आदमी रुपया अवश्य कमा लाते हैं। पर हम लोगोंको कहनेको यह हो जाता है कि देखो अमुक मनुष्य कुली बन के गया था और वहां

से इतना धन बटोर लाया। हम लोग यह नहीं विचारते कि १०० में ५ आदमी कमा लाये तो कौनसी बड़ी बात हुई। बाकी ९५ तो बिचारे भूखों मरते लौटे हैं। और जो आदमी कमा लाते हैं उनसे पूंछा जावे तो वे प्रायः यही कहेंगे कि भारतवर्ष में रह कर यदि उतना परिश्रम करते तो उससे अधिक नहीं तो कम भी नहीं कमा सकते थे। अस्तु तात्पर्य यह है कि लोगों के दिल में से और विशेषतया गांव के लोगों के हृदय में से यह भ्रम दूर कर देना चाहिये कि इन द्वीपों में जाकर आदमी मालामाल हो जाता है।

शारीरिक अवस्था—जो लोग गिरमिट में काम करते हैं उनमें से ९० फ़ी सदी की शारीरिक अवस्था शोचनीय है। यदि गिरमिट वाले बीमार पड़ते हैं तो वे प्लैण्टर लोगों के अस्पताल में भेज दिये जाते हैं पर जो लोग गिरमिट के काम से छूट कर स्वतन्त्र होजाते हैं उन्हें इस विषय में बहुत कष्ट सहना पड़ता है। स्वतन्त्र आदमी जो वहां सरकारी अस्पताल में जाना चाहें तो उन्हें इमीग्रेशन आफ़िस में जाना पड़ता है। इस आफ़िस के कार्य्य कर्त्ता जब पहले १०) जमा करा लेते हैं तब अस्पताल जाने के लिये पत्र देते हैं। यदि रुपया न हुआ तो गहना ही रखवा लेते हैं। पहिले तो जिनके पास दाम नहीं होते उनको अस्पताल में

भेजतेही नहीं और यदि कृपा करके भेज भी दिया तो उनके नाम ८ आना प्रति दिन के हिसाब से दाम जुड़ते रहते हैं और पीछे से उन्हें सब देना पड़ता है। क्या ही अच्छा हो यदि भारतवर्ष से कुछ डाकृर और वैद्य जाकर वहां अपने औषधालय खोल दें। स्वतन्त्र आदमियों की शारीरिक अवस्था साधारण है।

संगठन शक्ति—यहां पर हमें हर्षपूर्वक लिखना पड़ता है कि फ़िज़ी निवासी भारतीय बन्धुओं में अब तीन चार वर्ष से संगठन शक्ति का भी अंकुर उत्पन्न होगया है। यदि कोई कठिन परिश्रम करके चन्दा इकट्ठा करना चाहे तो वह भी हो सकता है। दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भाइयों के लिये हम लोगों ने अकेले सूवा नगर से १८ पौण्ड चन्दा करके भेजा था। फ़िज़ी का सब चन्दा ४० पौण्ड (६०० रु०) गया था हम लोगों ने ब्रिटिश इण्डियन एसोसियेशन नामक सभा भी की थी जो अब तक बराबर अपना काम कर रही है। उसके सभापति श्रीयुत मणिलालजी बैरिस्टर हैं और मन्त्री बाबू रामसिंह। श्रीयुत राममनोहरानन्द सरस्वती ने बहुत परिश्रम करके १४० पौण्ड चन्दा करके सरस्वती स्कूल नामक पाठशाला ताईबाऊ नामक ग्राम में स्थापित करदी है। श्रीमान् राममनोहरानन्द सरस्वती फ़िज़ी को अपने व्यय से गये हुए

हैं। ये महाशय जब ब्रह्म देश में थे तब फ़िज़ी से एक व्यक्ति ने इन के पास पत्र भेजा था। इसी तरह एक वर्ष पत्र व्यवहार होता रहा। तत्पश्चात् ६ जनवरी सन् १९१३ ई० को ये फ़िज़ी में पहुंचने के एक महीने बाद इन्होंने भ्रमण करना आरम्भ किया। हर्ष की बात है कि स्वामीजी ने फ़िज़ी-प्रवासी भारतवासियों की अशिक्षित सन्तान को शिक्षित बनाने का संकल्प किया है। स्वामी जी ने सामाकला स्थान में में व्याख्यान देते हुये कहा था कि 'मेरी आयु का शेष भाग फ़िज़ी प्रवासी भारतीय भाइयों की सन्तान के उद्धार के लिये है परमेश्वर उनकी इस प्रतिज्ञा को पूर्ण करे।

प्रसन्नता की बात है कि फ़िजी के मुसलमान लोग हिन्दुओं से मिले हुये रहते हैं। वे लोग बकरीद पर गाय की कुर्बानी कभी नहीं करते। चन्दे इत्यादि के कामों में भी वे आगे बढ़कर भाग लेते हैं। हम अशिक्षित आदमियों में इतना मेल होना कोई साधारण बात नहीं है।

फिजी प्रवासी भारतवासियों के विषय में कुछ निष्पक्ष लोगों की सम्मति —

फिजी की राजधानी सूवा में एक श्रीमती एच डडले (Miss H. Dudley) नामक मिशनरी हैं। आप आस्ट्रेलियन मेथोडिस्ट हैं और आप की फ़िजी के भारतवासियों से बहुत

कुछ सहानुभूति है। श्रीमती ने भारतवासियों की दशा पर खेद प्रकट करके १ पत्र इण्डिया नामक पत्र में भेजा था। यह पत्र माडर्न रिव्यू में उद्धृत किया गया था पाठकों के लिये मार्च १९१६ के माडर्न रिव्यू से लेकर उसे हम यहां लिखे देते हैं।

लेखिका श्रीमती डडले सूवा फ़िजीद्वीप

Sir,

Living in a country where the system called, "Indentured labour" is in vogue, one is continually oppressed in spirit by the fraud, injustice, and inhumanity of thich fellow creatures are the victims.

Fifteen years ago I came to Fiji to do mission work among the Indian people here. I had previously lived in India for five years. Knowing the natural timidity of Indian village people and knowing also that they had no knowledge of any country beyond their own immediate district, it was a matter of great wonder to me as to how these people could have been induced to come thosands of miles from their nwo country to Fiji. The women were pleased to see me as I had lived in India and could talk with them of their own country. They would tell me of their troubles and how they had been entrapped by the recruiter or his agents. I will cite a few cases.

One woman told me she had quarrelled with her husband and in anger run away from her mother-in-law's house to go to her mother's. A man on the road questioned her, and said he would show her the way. He took her to a depot for Indentured labour. Another woman said her husband went to work at another place. He sent word to his wife to follow him. On her way a man said he knew her husband and that he would take her to him. This woman was taken to a depot. She said that one day she saw her husband passing and cried out to him but was silenced. An Indian girl, was asked by a neighbour to go and see the Muharram festival. Whilst there she was prevailed upon to go to a depot. Another woman told me that she was going to a bathing ghat and was misled by a woman to a depot.

When in the depot these women are told that they can not go till they pay for the food they have, had and for other expenses. They are unable to do so. They arrive in this country timid fearful women not knowing where they are to be sent. They are alloted to plantations like so many dumb animals. If they do not perform satisfactorily the work given them, they are punished by being srtruck or fined, or they are even sent to gaol. The life on the plantations alters their demeanour and even their very faces. Some look crushed and broken-hearted, others sullen, others hard and evil, I shall never forget

the first time I saw "indentured" women, They were returning from their day's work. The look on those women's faces haunts me,

It is probably known to you that only about 33 women are brought out to Fiji to every one hundred men. I can not go into details concerning this system of legalised prostitution. To give you some idea of the results, it will be sufficient to say that every few months some Indian man murders for unfaithfulness the woman whom he regards as his wife.

It makes one burn with indignation to think of the helpless little children born under the revolting condition of the "indentured labour" system. I adopted two little girls daughters of two unfortunate women who had been murdered. One was a sweet, graceful child so good and true. It is always a marvel to me how such a fair jewel could have come out of such loathsome environments I took her with me to India some years ago, and there she died of tuberculosis. Her fair form was laid to rest on a hill side facing snow-capped Kinchin-chinga. The other child is still with me—now grown up to be a loyal, and true and pure girl. But what of the children—what of the girls—who are left to be brought up in such pollution ?

After five years of slavery after five years of legalised immorality—the people are "free', And what kind

of a community emerges after five years of such a life? could it be a moral and self respecting one? yet some argue in favour of this worse than barbarous system, that the free Indians are better off financially than would be in their own country! I would ask you at what cost to the Indian people? What have their women forfeited? what is the heritage of their children?

And for what is all this suffering and wrong against humanity? To gain profits--pounds, shillings and pence for sugar companies and planters and others interested.

I beseech of you not to be satisfied with any reforms to the system of indentured labour. I beg of you not to cease to use your influence against this iniquitous system till it be utterly abolished—H. Dudley. Suva Fiji November 4

अर्थात् श्रीमान्—एक ऐसे देश में रहते हुए जहां कि 'कुली प्रथा प्रचलित है, एक मनुष्य की आत्मा को अपने सजातीय लोगों के साथ छल, अन्याय और अमानुषिकता का वर्ताव होते हुए देखकर, बार बार पीड़ा पहुंचता है।

पन्द्रह वर्ष हुए जब मैं प्रवासी भारतवासियों में ईसाई धर्म का प्रचार करने के लिये फ़िजीमें आई थी। इसके पहिले मैं पांच वर्ष हिन्दुस्तान में रह चुकी थी। मैं यह जानती थी कि भारतवर्ष में गांव के रहनेवाले स्वभावतः भीरुहृदय होते

हैं और मुझे यह भी ज्ञात था। कि उन लोगों को अपने पास के ज़िले के अतिरिक्त और किसी देश का ज्ञान भी नहीं होता, अतएव यह देखकर मुझे अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि ये लोग अपनेदेश से हज़ारों मील दूर फ़िजी को आने के लिये किस प्रकार प्रेरित किये गये। फ़िजी की भारतीय स्त्रियां मुझे देख कर प्रसन्न होतीं थीं क्योंकि मैं पहिले भारतवर्ष में रह चुकी थी और उनके साथ उनके देशके विषयमें बातचीत कर सकती थी। वे मुझे अपने दुखों को बतलाया करती थीं और मुझे सुनाया करती थीं कि किस प्रकार हम आरकाटियों के जाल में फँसी। मैं यहां दो एक उदाहरण देती हूं:—

एक स्त्री ने मुझ से कहा 'मुझ से और मेरे पति से झगड़ा हुआ, इसीलिये मैं क्रुद्ध होकर अपने सास के घर से मा के घर को चल दी। रास्ते में सड़क पर मुझे एक आदमी मिला उसने कहा 'कहां जाती हो ? मैं तुम्हें मार्ग बतला दूंगा। इसी बहाने वह आदमी मुझे डिपो लेगया और वहां से शर्त-बन्दी में यहां भेज दी गई। एक दूसरी स्त्री ने कहा 'मेरा पति एक जगह काम करने के लिये गया था, उसने मुझे ख़बर भेजी कि तू यहां चली आ। मैं उसके पास जा रही थी कि मार्ग में मुझे एक आदमी मिला। उसने मुझसे कहा कि चलो मैं तुम्हें तुम्हारे पतिके पास ले चलूं। मैं उसकी जगह जानता हूं। वह आदमी मुझे डिपो में ले आया। जब मैं डिपो में थी

तो एक दिन मैंने अपने पति को वहां से जाते हुए देखा। मैं चिल्लाई परन्तु मुझे चुप कर दिया गया। डिपो से मैं फ़िजी को भेज दी गई,। एक हिन्दुस्तानी लड़की से इसके पड़ोसी ने कहा 'जा मुहर्रम का मेला देख आ' मेला में वह लड़की बहका दी गई और डिपो में भेज दी गई। एक और स्त्रीने मुझसे कहा 'मैं घाट पर स्नान करने जा रही थी। रास्ते में एक स्त्री ने मुझे बहका कर डिपो में भेज दिया।

जब ये स्त्रियां डिपो में पहुंच जाती हैं तो उन से कहा जाता है कि जब तक तुम खाने का ख़र्चा न देदेगी और जब तक दूसरी चीज़ों का व्यय न देदेगी तब तक तुम यहां से अपने घर नहीं जा सकतीं। वे बिचारी कहां से दे सकती हैं? ये भीरुहृदय और डरपोक स्त्रियां इस देश में भेज दी जाती हैं और उन्हें यह भी नहीं मालूम होता कि हम कहां भेज दी गई हैं? वे खेतों पर काम करने के लिये गूंगे जानवरों की तरह लगा दी जाती हैं। जो काम उन्हें दिया जाता है यदि वे उसे ठीक तरह नहीं करतीं तो वे पीटी जातीं हैं, उन पर जुर्माना होता है यहां तक कि वे जेल में भी भेज दी जातीं हैं। खेतों पर काम करते करते उनकी चेष्टा बदल जाती है और उनके चेहरे भी बदल जाते हैं। कुछ अत्यन्त पीड़ित और विदीर्ण हृदय दीख पड़ती हैं, कुछ उदास और उद्विग्न ज्ञात होती हैं और अन्य व्यथित और दुखित जान पड़ती हैं। बारबार उनके

म्लानमुखों की आकृति मुझे याद आ जाती है।

यह तो शायद आप को ज्ञात ही होगा कि फ़ी १०० पुरुष पीछे ३३ स्त्रियां फ़िजी में लाई जाती हैं। मैं इस व्यभिचारपूर्ण प्रथा के बारे में, जिसका विरोध क़ानून भी नहीं करता, विस्तार पूर्वक नहीं लिख सकती। इसके फल का कुछ बोध आप को कराने के लिये यह कहना पर्याप्त होगा कि महीने दो महीने पीछे एक न एक फ़िजीप्रवासी भारतवासी दुश्चरित्रता के कारण अपनी स्त्री को मार डालता है। इस कुली प्रथा के भयानक और अत्यन्त निन्दनीय कारणों से जो अनाथ बच्चे पैदा होते हैं उनका विचार करते हुए क्रोध से हृदय प्रज्वलित हो जाता है। मैंने दो लड़कियों को जिनकी कि मां मार डाली गई थी (और जिनके बापों ने फांसी की सज़ा पाई थी) ग्रहण कर लिया था। उन में से एक बड़ी ही सुन्दर और कोमल लड़की थी। यह बात मेरे लिये सर्वदा आश्चर्यजनक रही है कि ऐसी कुत्सित और निन्दनीय स्थिति में वह प्यारी, सच्ची रत्नस्वरूपा लड़की कैसे पैदा हुई। कुछ वर्ष हुए मैं अपने साथ उसे भारतवर्ष को लेगई थी, वहां पर उसके एक गांठ उठी और उसी से वह मर गई। हिम मण्डित किनचिनचिंगा के सामने पहाड़ पर उसका सुन्दर शरीर गाड़ दिया गया। दूसरी लड़की अब तक मेरे पास है और वह बड़ी सच्ची, पवित्र और आज्ञाकारिणी कन्या है परन्तु उन बच्चों

की बाबत उन लड़कियों की बाबत—तो विचार करो जो कि इस प्रकार की दूषित और कलंकित अवस्था में पाली जाती हैं।

पांच वर्ष की गुलामी के बाद—पांच वर्ष के क़ानून-प्रेरित दुराचारों के बाद-ये लोग फ़्री यानी स्वतंत्र हो जाते हैं। जिन लोगों ने पांच वर्ष तक ऐसी बुरी तरह जीवन व्यतीत किया हो उन लोगों से किस प्रकार का समाज संगठित होता है। क्या यह समाज सदाचारी और आत्माभिमानी हो सकता है? इस पर भी कुछ महाशय ऐसे हैं जो इस निष्ठुर और अत्यंत असभ्य कुलीप्रथा के पक्ष में तर्क करते हैं और कहते हैं कि शर्तबन्दी के बाद स्वतन्त्र हुए प्रवासी भारत वासियों की आर्थिक स्थिति अपने देश में रहने पर जो उनकी स्थिति होती उससे, उत्तमतर होती है।

मैं तुम से पूछती हूं कि इसमें भारतवासियों की कितनी अधिक हानि हुई है? उनकी स्त्रियों ने कौन अपराध किया है जिसके लिये उन्हें ये दण्ड दिया जाता है? और उनके बाल बच्चे कैसी दशा में पैदा होते हैं?

और फिर मनुष्य-जाति के विरुद्ध यह अन्याय और क्लेशोत्पादक कार्य किस लिये किये जाते हैं? इसलिये कि जिस से खांड की कम्पनियों को, प्लैण्टरों को और दूसरे स्वार्थी लोगों को पौण्ड शिलिङ्ग और पैंस का लाभ हो।

मैं आप से प्रार्थना करती हूं कि आप इस अन्यायपूर्ण कुली,प्रथा में किसी प्रकार के सुधारों पर राज़ी न हों मैं आप से याचना करती हूं कि आप बराबर इस प्रथा का विरोध करें जब तक कि यह अत्याचारपूर्ण प्रथा जड़ मूल से नष्ट न हो जावे।

एच. डडले सूवा फ़िज़ी नवम्बर ४

इस पर टिप्पणी करते हुए India के सम्पादक ने श्रीमती डडले के विषय में लिखा था।

Miss. Dudley, the writer of this pathetic letter, is the pioneer Indian missionary in Fiji. She is an Australian methodist and has done admirable and devoted service in undertaking the care of Indian orphan-girls whose mothers have been murdered and their fathers hanged as the result of sexual jealousy produced by the scarcity of women, which is one of the many blots upon the system of indentured labour."

अर्थात् इस करुणापूर्ण चिट्ठी की लेखिका श्रीमती डडले हैं जो कि फ़िजी में प्रवासी भारतवासियों में ईसाई धर्म्म का प्रचार करनेवालों में अग्रसर हैं। उन्हों ने भारतवासियों की अनाथ लड़कियों की रक्षा कर के प्रशंसनीय परोपकार का कार्य्य किया है। कुलीप्रथा के कितने ही दोषों में से एक दोष यह है कि इस में स्त्रियों की कमी होती है। इस कारण पुरुषों में स्त्रियों के लिये पारस्परिक ईर्ष्या उत्पन्न होती है। जो स्त्रियाँ

दुराचार के कारण मारडाली गई हैं और जिनके कि पति फलतः फांसी पर चढ़ा दिये गये हैं, उन्हीं की लड़कियों की रक्षा श्रीमती डडले करती रही हैं।

श्रीमती डडले के पत्र पर टीका टिप्पणी करने की आवश्यकता नहीं! हम नहीं समझते कि हमारी सरकार फ़िज़ी में मज़दूरों का जाना तो भी क्यों बन्द नहीं करती।

फिज़ी में Mr. J. W. Burtin साहब एक प्रसिद्ध ईसाई हैं। आप बड़े निष्पक्ष लेखक हैं। आप फ़िज़ी में कभी कभी मेरे यहां आया करते थे। आप को न जाने यह विश्वास कैसे पैदा होगया था कि मैं ईसाई हो जाऊंगा। एक बार उन्होंने मुझ से ईसाई होने के लिये कहा भी था मुझे अच्छी तरह याद है कि मैं ने यही उत्तर दिया था कि "पादरी साहब आप किस भ्रम में फंसे हुये हैं। मैं ईसाई होने वाला आदमी नहीं। अच्छा और तो और आप मेरे यहां काम करनेवाले इस लड़के को ही तर्क से ईसाई बना लीजिये!" पादरी साहब इस पर उस लड़के से बहस करने लगे। उस लड़के ने ऐसी युक्ति-संगत बातें पूछीं कि पादरी साहिब दंग रह गये। पादरी साहिब ने एक पुस्तक में उस लड़के का ज़िक्र करते हुए लिखा है कि जिन भारतवासियों के छोटे २ बच्चों में इतनी तर्क-बुद्धि हो उन में ईसाई धर्म का प्रचार होना दुस्साध्य है।

अस्तु,इन्हीं बर्टन साहब ने Fiji of to day*नामक एक पुस्तक लिखी है। इस पुस्तक में आपने फ़िजी की वास्तविक स्थिति की आलोचना की है। यद्यपि हम बर्टन साहिब के कुल विचारों से सहमत नहीं पर उनके आत्मिक बल की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते। सत्य और तिस पर भी अप्रिय लिखने के लिये बड़े आत्मिक बल की आवश्यकता है, और 'फ़िज़ी-आफ़-टु डे' को पढ़कर हम यह जान सकते हैं कि बर्टन साहब बड़े साहसी हैं। जिन प्लैण्टरों के डर के मारे हमारी सरकार कुली-प्रथा को बंद करने में हिचकती है, उन्हीं प्लैण्टरों के विरुद्ध सच्ची बातें बर्टन साहब ने लिखी हैं। उदाहरणार्थ दो चार बातें उपरोक्त पुस्तक में से हम उद्धृत करेंगे।

गोरे लोगों के अमानुषिक अत्याचारों के विषय में बर्टन साहब लिखते हैं " The young and brutal overseers on sugar estates (of Australian and Newzealand origin) take all sorts of liberties with good looking Indian women and torture them and their husbands in case of refusal. Sometimes compounders of medicines will call an Indian woman into a closed room (pretending to examine her, though she may protest there is nothing

* Fiji of To-day नामक पुस्तक Charles H. Kelly 26, Paternoster Row London E.C. से ७/२ शिलिंग में मिल सकती है।

the matter wither) and then torture her most indecently for the gratification of their lust and even for getting her to swear a charge against some Indian who may have incurred their displeasure. Women are known to have been fastened in a row to trees and then flogged in the presence of their little children."

अर्थात् जंगली और जवान ओवरसियर जो कि आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैण्ड के होते हैं, ख़ूबसूरत हिन्दुस्तानी स्त्रियों पर मनमाने अत्याचार करते हैं और अगर वे स्त्रियां मना करती हैं तो उनको और उनके पति को अत्यन्त दुःख देते हैं। कभी कभी दवाख़ाने के कम्पौण्डर किसी भारतीय स्त्री को एक बन्द कमरे में बुला लेते हैं और यह बहाना करते हैं कि आओ हम तुम्हारी डाक्टरी परीक्षा करें, चाहे वह बिचारी विरोध करे और कहे कि मुझे कोई बीमारी नहीं मैं नहीं जाना चाहती, पर तब भी बलात् उसे कोठरी में ले जाते हैं और फिर अपनी कामेच्छा पूर्ण करने के लिये अत्यन्त असभ्यता के साथ उस पर पाशविक अत्याचार करते हैं। अथवा उसे इस लिये तंग करते हैं कि वह एक ऐसे भारतवासी के विरुद्ध गवाही देदे जिससे कि उनकी कुछ अनबन होगई हो। सुना गया है कि स्त्रियां वृक्षों से एक कतार में बांध दी गई हैं और उनके छोटे २ बच्चों के सामने उन पर कोड़े फटकारे गये हैं।"

हा ! भारतीय निस्सहाय अबलाओं पर ये अत्याचार होते हैं और हमारे यहां के धनी और सुशिक्षित आदमी भी यह कहते हुये पाये जाते हैं "अजी ! हिन्दुस्तान की आबादी बहुत बढ़गई है, इसलिये यह ज़रूरी है कि बहुत से मर्द और औरत दूसरे मुल्कों और जज़ीरों में जाकर आबाद हों, वहां मज़दूरों की मांग है और वहां वे मौज़से रहेंगे" । ऐसे सुशिक्षित मनुष्यों से (यदि हम उन्हें सुशिक्षित कह सकते हैं) हमारी विनीत प्रार्थना है कि ज़रा आंखें खोलकर उपरोक्त अत्याचारों पर विचार करें ।

स्त्रियों की कमी के विषय में बर्टन साहब ने भी श्रीमती डडले की भांति लिखा है । बर्टन साहब का कथन है "भारत वासियों की स्थिति में सब से बड़ा दोष यह है कि यहां पर स्त्रियों की कमी है । इसका कारण वही कुली प्रथा है । प्रति सौ पुरुष पीछे ३३ स्त्रियां यहां लाई जाती हैं । इसका फल यह होता है कि बलात्कार, अपहरण और व्यभिचार इत्यादि के ही अभियोग प्रायः कचहरियों में दीख पड़ते हैं । न्यायसभा की हरएक बैठक में दो चार अभियोग इस तरह के आया करते हैं कि पुरुष ने अपनी स्त्री को परपुरुषसंगति के कारण मार डाला । समाजशास्त्र के अनुसार यदि विचारा जावे तो इस दोष की जड़ Indenture system अर्थात् कुली प्रथा

ही है। कोई एक दर्जन भारतवासी इस प्रकार हर साल फांसी पर चढ़ा दिये जाते हैं।"*

मजिस्ट्रेटों के विषय में बर्टन साहब ने बहुत ठीक लिखा है। विस्तारभय से हम उनके कथन का सारांश ही यहां दिये देते हैं।

फ़िजी में बहुत कम मजिस्ट्रेट क़ानून पढ़े हुए हैं, वे गोरे रंग के होते हैं और थोड़ा लिखना पढ़ना जानते हैं। बस मजिस्ट्रेट होने के लिये यही काफ़ी है और प्रायः बहुतसी जगहों में मजिस्ट्रेट ही मैडीकल आफ़िसर यानी डाक्टर का काम करते हैं। Tavinni नामक एक जगह में एक ही आदमी मजिस्ट्रेट District medical officer ज़िले का डाक्टर, पुलिस का इन्सपैक्टर, जेलखानों का सुप्रिनटेण्डैंट, बंदरगाह का स्वामी, सड़कों का दारोग़ा और अपने छोटे जहाज़ का कप्तान है।"

देखा पाठक आपने! फ़िजी की सरकार ने अपने आफ़िसरों को कैसा सर्वशक्तिमान् बनाया है! ऐसे सर्वशक्तिमान मनुष्यों से यह आशा करना, कि ये लोग अपने कर्त्तव्य का पालन करेंगे और न्याय करेंगे, व्यर्थ है।

---

*In Fiji every sitting of the Assizes is bound to have two or three cases of tragedy to be traced sociologically to the root-evil of the Indenture system *ie.* the paucity of women. Nearly a dozen Indians are thus hanged here every year. (Fiji of to day.)

बर्टन साहब का कथन है कि फ़िजी में पुलिस का प्रबन्ध ठीक नहीं और पुलिस संख्या में भी आवश्यकता से बहुत कम है। एक तो फ़िजी वैसे ही बहुत कम आबाद है और इस पर भी थाने और कचहरियां बीसियों मील की दूरी पर बसी हुई हैं।

The Inspector of Indian coolies only pays two visits a year to their miserable barracks where men and women are penned together like cattle and even these inspectors are for the most part not very keen about the grievances of Indians, as some of them are ex-employees of the C S. R. Co (Colonial Sugar Refining Company) which is the real king of the colony.

अर्थात् भारतवासी कुलियों का इन्स्पैक्टर उनके क्षुद्र और अभागे घरों को देखने के लिये साल भर में दो बार आता है। इन कोठरियों में स्त्री और पुरुष जानवरों की तरह भर दिये जाते हैं। और ये इन्स्पैक्टर भी ज़्यादातर भारतवासियों के दुखों पर विशेषतया ख़्याल नहीं करते क्योंकि उन में से कितने ही C. S. R. कम्पनी के पुराने नौकर होते हैं। वास्तव में यही कम्पनी इस उपनिवेश की असली मालिक है।

स्टेट में भारतवासियों को कैसा जीवन व्यतीत करना पड़ता है इस विषय में बर्टन साहब लिखते हैं:—

" The difference is small between the state, he now finds himself in, and absolute slavery......................

The coolies themselves, for the most part frankly call it 'Nark' (hell)! Not only are the wages low, the tasks hard, and the food scant, but it is an entirely different life from that to whichthey have been accustomed, and they chafe, especially first at the bondage......... No effort is made either by the Government or by the employers to provide the coolie with any elevating influence......... A company of course has no soul. So long as its lobour is maintianed in sufficient health to do its tasks, no more is required. The same may be said of its mules and bullocks. The children are allowed ot run wild. No educational privilages are given. As soon as they reach the age of twelve they, too, must go to the field.''

"जिस स्टेट में कुली को रहना पड़ता है उसमें और पूर्ण दासत्व में वहुत कम फ़र्क है .ज्यादातर कुली इसे स्पष्टतया नर्क कहते हैं। तन.ख्वाह कम होती है, काम बहुत कड़ा होता है और खाना कम मिलता है परन्तु इन कष्टों के अतिरिक्त एक कष्ट यह भी होता है कि उन्हें ऐसा जीवन व्यतीत करना पड़ता है जोकि उनके पहिले जीवन से बिलकुल भिन्न होता है और ये लोग जब पहिले पहिल इस बंधन में डाले जाते हैं तो बड़े संतप्त और क्षुब्ध होते हैं। न तो गवर्नमेंट और न कम्पनी ही उनकी उन्नति का कुछ प्रयत्न करती है। कम्पनीवालों के तो वास्तव में आत्मा होती ही नहीं। जब तक कम्पनी का काम मज़दूर लोग भले प्रकार करते रहते हैं

तब तक कम्पनी वालों को किसी बात की फ़िक्र नहीं (चाहे कुली लोग मरें या जियें) । और यही बात कम्पनी के खिश्चरों और बैज़ों के विषय में कही जा सकती है । लड़के लड़कियां उद्दण्ड बना दिये जाते हैं । शिक्षासम्बन्धी उन्हें कोई अधिकार नहीं दिया जाता । ज्योंहीं वे १२ वर्ष के हुए कि उन्हें भी खेत में काम पर जाना पड़ता है ।"

बर्टन साहब का यह कथन अक्षरशः सत्य है । फ़िजी की सरकार हमारी उन्नति के लिये कुछ नहीं करती पर हम फ़िज़ी की सरकार को उलाहना क्यों दें, जब हमारी सरकार ही हमें आरकाटियों के फन्दे में फँसने देती है और थोड़े से प्लैण्टर लोगों की प्रसन्नता के लिये हम ३० करोड़ भारत-वासियों के भावों और विचारों का कुछ ख़्याल नहीं करती !!

खेत के कार्य के विषय में बर्टन साहब एक जगह लिखते हैं:—

"The system of tasks prevails on the estates. So many chains of sugar-cane weeding or planting are counted, for example, as a task. For the satisfacory performance of this amount of work the coolie receives one shilling. He is expected to accomplish it in one day and the basis is that of an average man's ablity. The women are placed on the same footing, but their tasks are lighter and the payment proportionately less. If a man fails to perform the task set him within the day, he

is liable to be summoned to the court and may be fined or imprisoned for his slothfulness............When the coolie judges that the task is too hard, he has the right of appeal to the coolie inspector (a Government official) but as that gentleman is not seen oftener than once or twice a year, it is a somewhat limited privilege. Of course there is the magistrate to whom complaint can be made : but the court-house may be twenty or thirty miles away, and that is practically an impossible distance. It is not surprising, therefore, that under such conditions it frequently happens, that the coolie takes the law into his own hands tries the edge of his cane-knife upon the skull of the English overseer."

अर्थात् स्टेटों में 'टास्क' की प्रथा जारी है। गन्ने के खेत में इतने चेन लम्बी और इतनी चौड़ी जगह के नराने या बोने को एक 'टास्क' कहते हैं। अगर इस कार्य को अच्छी तरह करले तो कुलीको एक शिलिङ्ग मिलता है। कुलीसे आशा की जाती है कि वह इस कार्य को एक दिन में करले। यह आशा इसी आधार पर की जाती है कि एक साधारण मनुष्य इतना काम एक दिन में कर सकता है।

स्त्रियों के साथ भी ऐसा ही बर्ताव किया जाता है। लेकिन उनका काम कुछ हलका होता है और इसलिये मज़दूरी भी

उसी हिसाब से उन्हें कम मिलती है। अगर एक मनुष्य अपने काम को एक दिन में नहीं कर सकता है तो उसके नाम सम्मन आता है और अपनी सुस्ती के लिये उस पर जुर्माना होसकता है और उसे क़ैद भी हो सकती है। जब कुली को अपना कार्य बहुत ही कड़ा ज्ञात हो तो उसको अधिकार है कि वह 'कुली-इन्स्पेक्टर' से इसके लिये प्रार्थना करे, परन्तु यह महाशय साल भर में एक या दो बार से ज़्यादा नहीं आते हैं इसलिये यह 'अधिकार' भी एक संकुचित अधिकार है।। कुली-इन्स-पेक्टर एक सरकारी नौकर होता है। हां मजिस्ट्रेट के यहां भी कुली इसके लिये शिकायत कर सकता है परन्तु कचहरी २० मील या ३० मील दूर होती है और वस्तुतः इतनी दूर जाना कुली के लिये असम्भव है। इसलिये इस में कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि इस स्थिति में प्रायः कुली क़ानून को अपने हाथ में लेलेते हैं और गन्ने काटने की छुरी को अंग्रेज़ ओवरसियर के सिर पर जमा देते हैं।"

बर्टन साहब बहुत ठीक लिखते हैं, क्योंकि जब आप किसी जानवर को भी हर तरफ़ से घेर लेंगे और उसके बचने का कोई मार्ग न रहेगा तो फिर वह भी यही सोच लेगा कि 'मारो और मरो' और आखिर आदमी तो आदमी है। कुली इन्सपेक्टर साल में एक आध दफ़े आता है परन्तु तब भी वह हम लोगों की शिकायत कभी सुनता नहीं। मजिस्ट्रेट

की कचहरी में जा किस तरह सकते हैं क्योंकि छुट्टी तो कम्पनी देती ही नहीं और बिना छुट्टी लिये भाग कर शिकायत करना मानो अपने आप को जेल में भेजना है। और फिर शिकायत भी कैसे करे ? जिनके यहां पांच वर्ष तक अवश्यमेव काम करना है उनकी शिकायत कैसी ? आज हमने शिकायत की कल ही वह हम में जूतों की ठोकरें लगाता है, काम और भी कठिन देता है, लिखता १ शिलिङ्ग है रजिस्टर में, और देता ६ पैंस ही है। लीजिये, पाठक यह नतीजा हमारी शिकायत का हुआ।

बर्टन साहब का कथन है सन् १६०७ ई० में ११६८४ कुलियों में से १४६१ पर अभियोग लगाया गया कि उन्होंने सुस्ती से काम किया और उन पर जुर्माने हुए या उन्हें जेल हुई। बर्टन साहब आगे चलकर लिखते हैं:—

" Probably an even greater proportion of dissatisfaction did not make its appearance before the bench."

अर्थात् इससे भी ज़्यादा आदमी अपने कार्य से असन्तुष्ट थे, परन्तु वे कचहरी में नहीं लाये गये। मतलब यही कि मारपीट कर बलात् उनसे काम लिया गया। बर्टन साहब लिखते हैं:—

" one of the saddest and most depressing sights, a man can behold if he have any soul at all is a 'coolie line' in Fiji. "

अर्थात् यदि किसी मनुष्य में थोड़ा भी हृदय हो तो

संसार में सब से अधिक कष्ट दायक और विषादोत्पादक एक दृश्य उसके लिये यह होगा कि वह फ़िजी में 'कुली लैन' को देखे। बर्टन साहब ने हम भारतवासी कुलियों को "Human agricultural instruments" यानी 'मनुष्य के रूप में खेती के यन्त्र' कहा है और है भी बात ठीक; प्लैण्टर लोग हम कुलियों के साथ यही समझ कर बर्ताव करते हैं।

बर्टन साहब लिखते हैं कि जो लोग खेत पर काम करते हैं उनमें कितने ही थोड़ा बहुत पढ़े लिखे होते हैं, उच्च जाति के और सभ्य भी होते हैं। ये लोग भारतवर्ष से आरकाटियों द्वारा बहकाये जाते हैं कि थोड़े ही दिनों में वहां पहुंच कर तुम मालामाल होजाओगे। वे इन चिकनी चुपड़ी बातों पर विश्वास कर लेते हैं और जब फ़िज़ी में पहुंचते हैं तो उन्हें कठिन से कठिन परिश्रम करना पड़ता है और ओवरसियरों की ठोकरें खानी पड़ती हैं इत्यादि।

हां कभी कभी तो दुष्ट आरकाटी पढ़े लिखों को भी बहका देते हैं। आरा के ज़िले से एक एन्ट्रेंस तक पढ़ा हुआ लड़का आरकाटी ने बहका दिया जब वह फ़िजी पहुंचा तो उसे भी खेत पर काम करने को दिया गया। जैसे तैसे मरते गिरते उस ने कुछ दिन काम किया। तदनन्तर उस ने एक पत्र मेरे नाम भेजा और उस में लिखा 'मैं फांसी लगा कर मर जाऊंगा नहीं तो मेरे बचाने का कोई उपाय करो। मुझ से इतना

कठिन परिश्रम नहीं होता।' मैं ने अपनी तुच्छ बुद्धि अनुसार लिख भेजा कि एक दावा इमीग्रेशन आफ़िस पर अपने बाप को चिट्ठी लिखकर करवा दो। यदि आपके पिता आपका व्यय इमीग्रेशन आफिस को देदेंगे तो शायद ईश्वर की कृपा से आप छुटकारा पावें। निदान उसने ऐसा ही किया। बड़े ही प्रयत्न के बाद दासत्व से उसका पीछा छूटा। भारतवर्ष को आते समय उसे मैं अपने साथ लेता आया।

बर्टन साहब ने और भी कितने ही भारत-वासियों के कष्ट लिखे हैं। उन सब का वर्णन तो हम फिर कभी करेंगे, क्योंकि हमारा विचार Fiji of to-day का स्वतंत्र अनुवाद प्रकाशित करने का है, परन्तु दो चार बातें उनमें से यहां देना ठीक होगा।

(१) फ़िजी में सब जानवरों पर पहिचान के लिये गर्म लोहे से अङ्क डाले जाते हैं। यह कहना बाहुल्यमात्र है कि गौ पर भी यही अन्याचार किया जाता है। यह बात वास्तव में हम हिन्दुओं को दुःख देनेवाली है।

(२) नबुआ ज़िले में कुछ स्वतंत्र भारतवासी बड़ी बड़ी नावों पर माल लाद नदी द्वारा किनारे की कोठियों में बेचा करते थे। इस प्रकार रोज़गार करते उन को पंद्रह बीस वर्ष होगये थे। सन् १६१३ में एक गोरे ने नबुआ कोठी में दुकान खोली परन्तु उसका माल इन नाववालों के मुक़ाबले में कम

बिकता था। उसने मेनेजर से कह कर नदी से सब नावें हटवा दीं। ये बिचारे लाचार होकर सब नाव हटा लाये और रोज़गार से हाथ धो बैठे।

(३) मौरीशस में जहां कि कुली जाना अब बंद कर दिया गया है, भारतवासियों को व्यवस्थापक सभा के सभासद चुनने के लिये वोट देने का अधिकार है, पर फ़िजी में यह अधिकार भी नहीं। यह भी ग़नीमत है कि फ़िजी में चुंगी के मेम्बर चुनने के लिये भारतवासियों को वोट देने का अधिकार है। पर अब फ़िजी के गोरे लोग यह तुच्छ अधिकार भी छीनने की फ़िक्र में हैं। वे एक बिल पेश करना चाहते हैं जिसमें कि वोट देने वालों को एक परीक्षा अंग्रेज़ी में देनी होगी तब यह अधिकार मिलेगा।

(यदि फ़िजी की सरकार इसे स्वीकृत करले तो वास्तव में उसका यह बड़ा भारी अन्याय होगा।

एक भी स्कूल नहीं तिस पर भी तुर्रा यह कि Education test in English लिया जावेगा !!! क्या हम भारतवासी पेट में से अंग्रेज़ी पढ़ कर निकलेंगे ? ले०)

(४) जो भारतवासी गन्ना उगाते हैं उन्हें अपने गन्ने जिस कीमत पर कम्पनी लेती है देने पड़ते हैं क्योंकि दूसरा कोई ख़रीदने वाला नहीं। जो भारतवासी न्यूज़ीलेण्ड या आस्ट्रेलिया को केले भेजना चाहें तो उसे गोरा दलाल अवश्य

ही करना पड़ता है। यह दलाल स्वयं लाभ का अधिकांश अपने लिये रखता है।

(५) फ़िजी में कोई ऐसे अमीर भारतवासी नहीं हैं जो कलकत्ता और बम्बई से माल सीधा अपने नाम मंगालें इस लिये कुछ यूरोपियन लोगों की कम्पनी ही माल मंगाती हैं। ये कम्पनी छोटे २ भारतवासी बजाजों और दूकानदारोंसे मन माना नफ़ा लेती हैं।

इन बातों पर टीका टिप्पणी करने की आवश्यकता नहीं। आगे चलकर बर्टन साहब कुली प्रथा के विषयमें लिखते हैं।

"The system is a barbarous one, and the best supervision can not eliminate cruelty aud injustice. Such a method of engaging labour may be necessary in order to carry out the enterprises of capital; but there is something dehumanising and degrading about the whole system: it is bad for the coolie: it is not good for the Englishman."

अर्थात् कुली प्रथा बड़ी निष्ठुरता पूर्ण है और अच्छी से अच्छी देख भाल भी इस में से निर्दयता और अन्याय को दूर नहीं करसकती। धन लगा कर व्यवसाय करने के लिये मज़दूर रखने की यह पद्धति भले ही आवश्यक हो, पर यह सम्पूर्ण प्रथा भ्रष्ट, अपकृष्ट और मनुष्यत्व नष्ट करने वाली है। कुली

लोगों के लिये यह बुरी है और अङ्गरेज़ों के लिये भी यह अच्छी नहीं।

उपरोक्त कष्टों को सहते हुए भी स्वतन्त्र भारतवासी फिजी का कितना उपकार कर रहे हैं यह कहने की आवश्यकता नहीं। २० सहस्र एकड़ भूमि को भारतवाजी जोतते बोते हैं, यानी ५५८० एकड़ गन्ना, २००० एकड़ केला ११५८ एकड़ मक्का, ६३४७ एकड़ धान इत्यादि।

राज्य प्रबन्ध।

फ़िजी ब्रिटिश सरकार का एक उपनिवेश है। अंग्रेज़ सरकार की ओर से वहां गवर्नर नियत होके जाता है। गवर्नर की सहायता के लिये व्यवस्थापक और कार्य-कारिणी सभायें हैं। इन सभाओं का सभापति गवर्नर होता है। व्यवस्थापक सभा में गवर्नर के चुने हुये १० सरकारी अफ़सर सदस्य होते हैं। फ़िजियन लोगों के सरदारों की सभा अपनी ओर से द सदस्य भेजती है और ६ सदस्य सर्व साधारण द्वारा चुने जाते हैं। गवर्नर कार्य्यकारिणी सभा का काम, चीफ जस्टिस, अटार्नी जनरल, नेटिव कमिश्नर, इमीग्रेशन विभाग के एजेण्ट जनरल और रिसीवर जनरल की सहायता से करता है। बाहर से आये हुये माल पर जो कर लगाया जाता है वही अधिकतर वहां आमदनी का ज़रिया है। सन् १९११ में कुल आमदनी २४०३०४ पौण्ड १४ शि० हुई, इसमें

से १४६६२८ पौण्ड ६ शिलिंग ३ पैंस आमदनी उस महसूल से हुई जो बाहर से आई हुई वस्तुओं पर लगाया गया था। जो आदमी व्यापार करते हैं उन्हें लैसंस लेना पड़ता है। विशेष २ पेशे वालों पर भी कर लगता है। सन् १९११ ई० में Building Tax ordnance घरघन्ने का क़ानून पास हुआ और सब घरों पर कर लगने लगा। फ़िज़ी के आदिम निवासियों में प्रत्येक बालिग़ पुरुष को १० शि० से लेकर १ पौण्ड तक प्रति वर्ष टैक्स देना पड़ता है। फ़िजी की ज़मीन पर वहां के आदिम निवासियों का अधिकार है। यह ज़मीन पट्टे पर उठाई जाती है। सरकार पट्टे के रुपयों को इकट्ठा करके फ़िजियन ज़िमीन्दारों में बांट देती है।

कृषि और व्यापार।

फ़िजी में तीन चीज़ों की खेती ज्याद:तर होती है, गन्ना, केला और नारियल। फ़िजी की भूमि गन्ने के लिये विशेषतया उपयोगी है और नदियों और समुद्र के किनारे की ज़मीन में तो बड़ी कसरत से गन्ना पैदा होता है। मुख्यतया ६ ज़िले गन्ने की खेती के लिये प्रसिद्ध हैं:—

रेवा	१०००० एकड़ में गन्ने की खेती होती है			
वा	१४०००	”	”	”
लतौका	१५०००	”	”	”
नवुआ	६०००	”	”	”
राकीराकी	१२००	”	”	”
लवासा	१०५००	”	”	”

अकेली C.S.R. कम्पनी ही ६० हजार टन खांड़ प्रतिवर्ष तयार करती है। केला भी फ़िजी में बहुतायत से होता है। वैसे तो केला फ़िजी में सैकड़ों वर्षों से होता है परन्तु सन् १८४८ ई० में चीन से केले के पौधे लाये गये थे। चीनी पौधे क़द में बहुत छोटे होते हैं और तूफ़ान और आंधी उन्हें विशेष हानि नहीं पहुंचा सकती। सन् १९०६ से १९११ तक ४११७२ डब्बे केले आस्ट्रेलियाको और ११७४७६ डब्बे केले न्यूज़ीलैण्ड को भेजे गये।

इनके अतिरिक्त कपास, काफ़ी, मक्का, तमाखू अंडी, चांवल इत्यादि भी फ़िज़ी में पैदा होते हैं। रस्सी इत्यादि बनाने के लिये केतकी भी फ़िज़ी में पैदा की गई है।

इमीग्रेशन विभाग।

प्रायः तीन तरह के आदमी फिजी में शर्तबन्दी में काम करते हैं (१) भारतवासी (२) फ़िजी के आदिम निवासी (३) पालीनीशियन लोग।

इनमें आदिम निवासियों को रखने में तो ज़्यादा ख़र्च पड़ता है और वे काम भी नहीं करते, पालीनीशियन लोगों ने अब अत्याचारों से तङ्ग आकर शर्तबंदी में काम करना बंद कर दिया है। अतएव बिचारे भारतवासियों को ही सैकड़ा मुसीबतों के सहते हुये और मार खाते हुये कुलीगीरीका काम

करना पड़ता है। कलकत्ता और मद्रास में सरकारी इमीग्रेशन एजेण्ट हैं। ये लोग Recruiters आरकाटियों को नौकर रखते हैं। ये आरकाटी लोग हमारे भोले भाले भाइयों को बहकाया करते हैं। कोई चौबों की शकल में मथुरा में घूमता है तो कोई हरद्वार में पंडा बना बैठा है, कोई रियासत में कहता है कि 'कुलियों को २२ रु० महावारी नौकरी हम दिलवाते हैं। हमारा यह काम स्वार्थ का नहीं यह गवर्नमैण्टी काम है' तो कोई कानपुर में सेठ बना हुआ जेब में घड़ी डाले हुये और हाथ में छड़ी लिये हुये कहता है 'हम तुमको नौकरी दिलवायेगा कलकत्ते में हमारी जमैका नाम की धर्म्मशाला बन रही है। हम नौ आने रोज़ देगा।' कोई डाकूर बन जाता है तो कोई सिपाही के भेष में घूमता हुआ गांव वालों को बहकाता है। तात्पर्य यह है कि ये धूर्त्त आरकाटी पुराने ज़माने के राक्षसों की तरह नाना प्रकार के भेष धारण करके हमारे भाइयों को बहकाया करते हैं। cadtal नामक समाचार पत्र के सम्पादक ने अपने एक सम्पादकीय लेख में लिखा था।

"In no country in the world would this state of matters be tolerated for a moment and we think the position serious."

अर्थात् "संसार के किसी भी देश में ये बातें सह्य न होंगी हम इस स्थिति को अनुपेक्ष्य और गम्भीरतापूर्वक ध्यान देने योग्य समझते हैं।"

आगे चलकर सम्पादक जी ने लिखा है:—

"There is now a number of recruiting Agents...... who have done all that man can do to ledge the labourers as a preserve for them to plunder.

Contractors are every where plundering and seizing the labourer and selling him for something like Rs. 210 or more per head, of which the poor labourer receives not even a pinch of salt. This the very essence of scoundrelism, an absolute trafficing in human fiesh, of which the responsible Government takes no notice, is tolerated everywhere, while schemes permitting of the labourer, proceeding to the labour districts in a state, that permit all the comfort which he desires, are sternly suppressed.

अर्थात् अब बहुत से आरकाटी पाये जाते हैं जिन्होंने कि यह समझ रक्खा है कि मज़दूर हमारे लूटने के लिये ही बनाये गये हैं और जिन्होंने कि मज़दूरों को बहकाने और बेचने में कोई उपाय बाकी नहीं छोड़ा। ये ठेकेदार लोग जगह २ मज़दूरोंको बहका रहे हैं और पकड़ रहे हैं और २१०) प्रति मनुष्य के हिसाबसे बेच रहे हैं; इन २१०) में उस विचारे मजदूरको एक कानी कौड़ी भी नहीं मिलती। यह बदमाशी, यह मनुष्योंका क्रय विक्रय, हर जगह पर सह्य समझा जाता है, और गवर्नमेण्ट जो हमारी रक्षा की उत्तरदाता है इस पर ध्यान भी नहीं देती,

परन्तु किसी रियासत के एक ज़िले में मज़दूरों के भेजने के लिये जो स्कीम तय्यार की जाती है—चाहे इन रियासतों में मज़दूरों को अभीष्ट आराम और सुख हों—तो वह स्कीम बड़ी सख्ती के साथ रद्द करदी जाती है।"

उपरोक्त कथन सर्वथा सत्य है, परन्तु इसे सुनता कौन है। रियासतों में मज़दूर नहीं भेजने चाहिये। क्यों ? इसलिये कि ऐसा करने से हिन्दुस्तानियों को लाभ होने की सम्भावना है !! हमारे आरकाटी सेठों की जो ट्रिनीडाड, जमैका, क्यूबा नेटाल, हौण्डूरास, फ़िजी नामक धर्मशालायें हैं (क्योंकि आरकाटी लोग इन टापुओं को अपनी धर्मशाला बतलाते हैं) उन्हीं को मज़दूरों के भेजने की आवश्यकता है !!!

किम्बहुना इस विषय को हम यहीं छोड़ते हैं पीछे से उपसंहार शीर्षक अध्याय में इस पर विस्तृत रूप से लिखेंगे।

कमीशन की नियुक्ति

सन् १६१३ ई० में भारतवर्ष से एक कमीशन नियुक्त हुआ सरकार ने इस कमीशन में दो पुरुष मुक़र्रर किये थे। एक तो मिस्टर मैकनील साहब और दूसरे ख़ुरजा निवासी सेठ नत्थीमल के भतीजे श्रीयुत चिम्मनलालजी। जब हम लोगों ने सुना कि कमीशन आ रहा है तो हमें बड़ी प्रसन्नता हुई। ये लोग सितम्बर के महीने में फ़िजी पहुंचे। यद्यपि अभी हम

इस कमीशन के कार्य्यों की आलोचना करना ठीक नहीं समझते तथापि इस विषय में थोड़ा सा निवेदन हमें करना है। जब कोठियों के गोरे लोगों को यह ज्ञात हुआ कि कमीशन आनेवाला है तो कई दिन पहिले से उन्होंने हमारे भाइयों को धमकाना आरम्भ किया। उन्होंने भारतवासियों से कहा "देखो तुम्हारे लिये कमीशन आ रहा है। अगर तुमने हमारे ख़िलाफ़ एक भी बात कही तो फिर समझ लेना कि बस तुम्हारी आफ़त आ गई, कमीशनवाले तो दो चार दिन में यहां से चले जावेंगे और तुम्हें हमारे यहां ५ वर्ष तक काम करना है। ख़बरदार यदि एक भी बात मुंह से निकाली, नहीं तो हम तुम्हारा घूंसों से मुंह तोड़ देंगे"। इस प्रकार डराये गये। लोगों ने कमशीन के सामने क्या कहा होगा यह आप स्वयं सोच सकते हैं। जब कमीशन के सदस्य लतौका में पहुंचे तो मिस्टर मैकनील तो दौरे पर गये लेकिन श्रीयुत चिम्मनलाल जी कुछ अस्वस्थ होने के कारण लतौका होटल में वहीं रहे। एक दिन क्या हुआ कि एक गोरे ओवरसियर ने एक भारतवासी के इतने घूंसे मारे कि विचारा अधमरा होगया, घूंसों के मारे उसके मुंह से ख़ून गिरने लगा और उसके दो दांत भी टूट गये। उसी दशा में उन दांतों को हाथ पर रखकर चिम्मनलालजी के पास लाया और कुल हाल कह सुनाया। श्री चिम्मनलाल जी ने उसे एक चिट्ठी देकर थाने में जाने के

लिये कहा। वह थाने को जा रहा था कि बीच में ओवरसियर साहब मिल गये और उन्होंने उसे खूब धमकाया और कहा 'सब्र करो' चार दिन बाद चिम्मनलाल चले आवेंगे क्या चिम्मनलाल तुम्हारे बाप हैं? पांचवर्ष के लिये हम तुम्हारा बाप है। कमीशन के जाने पर हम तुम्हारी गर्मी सब निकाल देंगे। वह बिचारा इस धमकी में आ गया और चुप रहगया।

जिन २ कोठियों में कमीशन गया वहां प्लैएटर लोगों के सामने ही हमारे भाइयों से प्रश्न किये गये। अत्याचारी के सामने उसके विरुद्ध गवाही देना बहुत ही कठिन काम है, यह काम और भी अधिक कठिन हो जाता है जब ५ वर्ष उस अत्याचारी के नीचे और काम करना हो। कमीशन के सदस्य नोकोमोदो भी गये थे जहां से कि वाइनी वकासी नामक कोठी एक मील थी; इसी कोठी में कुन्ती नामक चमारिन रहती है। खेद है कि कमीशन के सदस्यों ने कुन्ती से पूंछ पांछ करने का कष्ट नहीं उठाया।

हम लोगों ने श्रीयुत चिम्मनलाल जी की सेवा में एक पत्र द्वारा निवेदन किया था। इस पत्र में अपने कष्टों का हाल लिखा गया था और सुधार के लिये प्रार्थना की गई थी। पत्र का सारांश यह था:—

जितने कुलम्बर (overseer) होने चाहिये, सब विवाहित होने चाहिये। इन लोगों को भारतीय रीति रिवाज़ और

हिंदी भाषा से थोड़ा बहुत परिचित होना आवश्यक है, जिससे कि वे हम लोगों के दुःख सुख को समझ सकें ।

प्रायःकुली इन्सपेक्टर कुलम्बर या बड़े साहब के घर पर जा कर बराण्डी उड़ाते हैं। उन का कर्त्तव्य है कि खेत में जाकर हम लोगों के कष्टों की जांच करें और उनके निवारणार्थ प्रयत्न करें। जो आदमी कुलम्बर का काम कर चुका हो उसे कुली इन्सपेक्टर नियुक्त नहीं करना चाहिये, क्योंकि जो आदमी पहिले कुलम्बरी का काम कर लेता है उस के दिल में दया और शील का लवलेश भी नहीं रहता। कुली इन्सपेक्टर भी बिवाहित होने चाहिये। उनके लिये यह अत्यन्त आवश्यक होना चाहिये कि वे हिन्दी भाषा बोल सकें और समझ सकें प्रतिमास उन्हें प्रत्येक कोठी में जाकर रिपोर्ट लिख कर लानी चाहिये।

जो लोग भारतवर्ष से आ कर यहां मर गये हैं, उनका धन सरकारी ख़ज़ाने में जमा है। हम पूछते हैं कि सरकार ने उसे किस काम में व्यय किया? क्या सरकार का यह कर्त्तव्य नहीं है कि उस धन से दो एक स्कूल ही बनवादे जिससे कि हम लोगों को अपने बच्चों को पढ़ाने का सुभीता हो।

मिस्टर बर्टन साहब ने अपनी पुस्तक Fiji of To-day के २४३ वें पृष्ठमें लिखा है 'कम्पनी;नहीं चाहती हैं कि हिन्दुस्तानी लोग पढ़ें"। क्या कम्पनी यह चाहती है कि हम भारत

वासी सदा अशिक्षित और प्लेण्टरों के गुलाम ही बने रहें ?

जो हमारे भाई भारतवासी अपनी युवावस्था में कम्पनी का काम करते हैं, वे जब बूढ़े हो जाते हैं तो उनकी परवरिश करने वाला कोई नहीं रहता। वे बिचारे फ़िजी में भूखों मरते हैं। कुली एजेण्टों का यह कर्त्तव्य है कि अपाहज आदमियोंको भारतवर्ष भेज देवें। इसका व्यय सरकार को उस रुपये में से देना चाहिये जो कि मृत भारतवासियों का सरकारी ख़ज़ाने में जमा हो।

हिन्दुस्तानियों को जो वेतन यहां मिलता है वह बहुत थोड़ा है। इस पर भी सरकार खाद्यपदार्थों पर बहुत कर लगाती है, उदाहरणार्थ दाल पर फी टन ३ पौण्ड ड्यूटी है इस लिये इतने कम वेतन में काम नहीं चल सकता। यहां की कुछ चीज़ों का भाव सुन लीजिये। आटा एक शिलिङ्ग का ६ पौण्ड चावल एक शिलिङ्ग का ४ पौण्ड और दाल एक की ४ पौण्ड।

जो गोरे लोग बलात् हमारे देशकी स्त्रियों पर पाशविक अत्याचार करते हैं उन्हें खूब कड़ी सजा मिलनी चाहिये।

सरदार वह होना चाहिये जिस को कुली एजेण्ट खुद आप मंगवावे और स्वयं उसे कोठी में भेजे। सरदार का सम्बन्ध सीधा कुली एजेण्ट से होना चाहिये न कि ओवरसिअरों से। ओवरसियर लालच देकर गिरमिटिया सरदारों से

खूबसूरत औरतों को मंगवाते हैं और जो नहीं लाते तो सरदारी से उन को छुड़ा देते हैं। सरदारों को उनके सब कर्त्तव्य समझा देने चाहिये। कुली एजेण्टों को चाहिये कि सरदारों के काम पर कड़ी दृष्टि रक्खें। श्रीयुत वर्टन साहब ने 'फ़िजी आफ़ टूडे' में २१० पन्ने पर लिखा है कि एक ओवरसियर ने एक सरदार से कहा कि तुम जाकर एक रूपवती स्त्री ले आओ। वह सर्दार लिखा पड़ा होशियार था, उसने ऐसा करने से इंकार कर दिया। इसी वास्ते कुलम्बर ने सरदार को ख़ूब मारा और उलटी उसके ऊपर नालिश करदी। बिचारे सरदार को ६ महीने की जेल हुई। पादरियों ने इस पर लाट साहब के पास अर्ज़ी भेजी। तब कहीं वह सर्दार जेल से छूटा। वह दुष्ट कुलम्बर कोठीसे निकाल दिया गया।

जिन कोठियों में १५ से अधिक छोटे २ बच्चे होते हैं उन में एक नर्स रक्खी जाती है, जोकि स्त्रियों के काम पर जाने पर उन के बच्चों को देखे रहती है। नर्स के काम के लिये हिन्दुस्तानियों से सलाह ले कर विश्वसनीय स्त्रियां रखनी चाहिये। कितनी ही धूर्ता नर्स कुटनी का काम करती हैं।

भूमि के विषय में भी हम सब को बहुत कष्ट है। हम लोगोंको जंगलियों को घूंस देनी पड़ती है तब वे बड़ी मुश्किलों के बाद राज़ी होते हैं। इस पर भी जो सरकार की मर्ज़ी में

आया तो ज़मीन मिली और नहीं तो सब प्रयत्न और धन व्यर्थ जाता है। दिन पर दिन हम लोगों के लिये कड़े क़ानून बनाये जाते हैं गोरा जितनी ज़मीन लेना चाहे उसको उतनी मिल सकती है वह सस्ती से सस्ती २ शि० से ३ शिलिङ्ग बीघे तक ख़रीद सकता है कानून बनाने वाले वे ही गोरे हैं जिन की हजारों बीघे भूमि है और जो कि हम भारतवासियों को भूमि देना पसन्द नहीं करते। हमारे भाई जब जङ्गल काट कर ज़मीन तयार करते हैं तब उनकी ज़मीन छीन ली जाती है। जिन के पास चार या पांच वर्ष से सरकार ज़मीन है, उन को सरकार से नोटिस मिला है कि जब सरकार को आवश्यकता होगी तब ६ महीने का नोटिस देकर सरकार निकाल देगी।

हमारे दुर्भाग्यवशत् श्रीयुत चिम्मनलाल जी बीमार पड़ गये और कमीशन उन स्टेटों में जा भी नहीं सका जो कि जंगल में बसी हुई हैं और जहां कि गोरे लोग हमारे भाइयों को और भी अधिक कष्ट देते हैं।

श्रीयुत चिम्मनलाल जी दबेऊलेवू ज़िला रेवा में जंगलियों के एक स्कूल का उत्सव देखने के लिये गवर्नरके साथ गये थे। वहां पर एक जंगली ज़िमींदार ने श्री० चिम्मनलाल जी से हाथ मिलाते वक्त अपनी भाषा में कहा था "क्या आप नहीं जानते हैं कि आपके देशकी स्त्रियां गिरमिट में काम करने के

लिये इस देश में आती हैं और उन पर यहां तरह तरह के ज़ुल्म किये जाते हैं! क्या इन स्त्रियों को देख कर आपकी आंख से लोहू नहीं निकलता ?" खेद है श्रीयुत चिम्मनलाल जी फ़िज़ी भाषा नहीं जानते थे। मैं वहीं पीछे खड़ा हुआ था और चाहता था कि कोई दुभाषिया इस बात को चिम्मनलाल जी को समझा दे, देखें वे इसका क्या उत्तर देते हैं। पर खेद है ऐसा नहीं हुआ। यदि ऐसा होता भी तो एक सहृदय भारतवासी के लिये तो इसका केवल एक उत्तर था वह यह कि लज्जा से मुख नीचा कर के दो आंसू बहाता।

मेरी रामकहानी

फ़िज़ी में अपने पहुंचने का हाल मैं लिख चुका हूं। मैं नौसूरी नामक कोठी को भेज दिया गया था। वहां पर ओवरसियरने ८ फ़ीट लम्बी ८ फ़ीट चोड़ी कोठरी दी जिसमें कि मुझे और एक मुसलमान और एक चमार को रहने के लिये आज्ञा दी गई मैंने उस ओवरसियर से कहा कि मैं इन लोगों के साथ रहना ठीक नहीं समझता। पर ओवरसियर ने मुझ से ललकार कर कहा"जाओ हम नहीं जानटा, रहना होगा।" तत्पश्चात् मैंने अपने साथियों से कहा कि आप ही कृपा करके किसी दूसरी कोठरी में चले जाइये। जैसे तैसे वे उस रात को एक दूसरी कोठरी में जाने को राज़ी हुये। प्रातःकाल मैं हम

तीनों लोगों के लिये एक लोहे की हांड़ी मिली; उसे वे लोग Iron cast कहते हैं इस हांड़ी की प्रशंसा करना मेरी शक्ति के बाहर है। वह काली हांड़ी मानो कुली प्रथा की कालिमा को प्रकट कर रही थी। कोई दो घंटे में मैंने उसे साफ़ किया, और फिर उस में चावल चढ़ा दिये। मैंने चावल चढ़ाये ही थे कि इतने में वह चमार और मुसलमान ओवरसियर को लेकर चले आये, उन लोगों ने शिकायत करदी कि वह हांड़ी हमको नहीं दी गई। ओवरसियर ने मुझे आज्ञा दी कि पहिले इन लोगों को हांड़ी दो, पीछे तुम भोजन बनाना। मुझे हांड़ी देनी पड़ी। फिर मैं एक स्वतंत्र भारतवासीके यहां गया और उससे हांड़ी लेकर अपना काम चलाया। पहिले ६ महीने में जो सामान एक सप्ताह का मुझे मिलता था उसे मैं चार दिन में ही खा डालता था और शेष दिन स्वतंत्र भारतवासियों से मांग जांच कर काम चलाता था और अपनी क्षुधा देवी को नमस्ते करके संतोष धारण करने की प्रार्थना किया करता था परन्तु मेरी दयालु क्षुधादेवी कम्पनी के दाल चावलों को देखते ही सुरसा का पथ पकड़ लेती थीं। यद्यपि मैं कुली प्रथा की कालिमा को प्रकट करनेवाली भैरवदेव के रक्त की हांड़ी को बड़ी शीघ्रता से मांजता था तथापि वह अपनी कालिमा को नहीं त्यागती थी। इतने में मेरी दयालु क्षुधादेवी क्षण २ में मुझे ल कार ललकार कर ओवरसियरों से कुछ ही कम

दुःख देतीं थीं और सम्पूर्ण रसद को चार ही दिन में चट कर पांचवें दिन कालोनियल शुगर रिफ़ायनिङ कम्पनी, फ़िजी के कर्मचारी और रसद का एक्ट पास करनेवालों को आशीष दिया करती थीं। क्षुधादेवी कभी मुझ से युद्ध में हार जाती थीं तब मैं खींच खांच कर किसी सप्ताह में रसद को पांच दिन को कर लिया करता था। पाठक! एक दिन मैंने अपने मैनेजर से कहा कि मुझे रसद और मिलना चाहिये मेनेजर ने कहा "वेल टुम आडमी हाय कि घोरा"? मैंने उत्तर दिया "था तो आदमी लेकिन इस कुदारी ने मुझे घोड़ा बना दिया है। इसी कुदारीने मेरीं क्षुधादेवी को जगाया है।" मैनेजर हंस पडा और कहा अच्छा चिट्ठी ले जाओ। मैं चिट्ठी खाने खाने का सामान देनेवाले साहब के पास दुकान में ले गया २ पौण्ड यानी १ सेर कच्चे चावल मिले। मेनेजर के पास ले आया। उसने कहा हमारे सामने रांधो मैं ने भात बनाकर तैयार किया। उसके सामने तीन हिस्सा खा गया तब तो मेनेजर साहब चम्पत हुए। उस के दूसरे सप्ताह से मुझे रसद १ सेर क़ानून से अधिक मिलने लगी। चौथे सप्ताह में एक व्यक्ति ने मैनेजर से कहा कि मुझे भी रसद अधिक मिले। मेरे भी खाने भर को नहीं होती। तोताराम को तो मिलने लगी है। मैनेजर ने कहा क़ानून के मुताबिक दिया जायगा उस दिन से अधिक मिलना मेरा भी बन्द हो गया। उसी

दिन से क्षुधादेवी फिर सताने लगी। हा पराधीनते ! तू बुरी बला है हा मातृभूमि तेरे पुत्रों की यह दशा ! पहिले मुझे भी फुल टास्क यानी पूरा काम दिया गया था पर वह इतना अधिक था कि मुझसे कभी नहीं हो सकता था। ओवर सियर मुझे बहुत तंग किया करता था। ज्योंही मेरे काम को देखने आता दो चार थप्पड़ मुझ में जमा जाता था। एकबार मैंने मन में ठान लिया कि चाहे कैद में भले ही जाना पड़े परन्तु इस दुष्ट औवरसियर को मारे बिना न छोड़ूंगा। एक दिन वह ओवरसियर साहब कोट पतलून पहिने और हैट लगाये हुये झूमते २ आये और आतेही एक घूंसा मेरे सिर में जमाया। गोरे लोग घूंसे लगाने में तो बड़े तेज़ होते हैं उस घूंसे के मारे मेरा सिर भिन्ना गया। मैं चुप रह गया, ओवरसियर साहब क्यों मानने वाले एक डबल घूंसा फिर लगा ही तो दिया। अबकी बार मुझे क्रोध आ गया। मैं ने कुदारी तो रख दी और फिर एक साथ ओवरसियर की टांगों में सिर डाल कर ऐसा पटका कि धड़ामधम नीचे चित्त जा पड़े, गिरते ही मैंने दोनों पांव साहब की छाती पर जमा दिये और फिर मारना शुरू किया। इतने घूंसे मारे कि ओवर सियर साहब के दो दांत टूट गये मुंह से लोहू निकलने लगा कनपटी फूट गई। पाठक ! यह न समझें कि यह काम मैंने बड़ी वीरता से किया था, मुझे इस बात का डर था कि कहीं

अगर यह उठ बैठा तो मुझे मार डालेगा, और मार डालना कोई बड़ी बात उसके लिये नहीं थी क्योंकि पीछे से वह not guilty अनपराधी सिद्ध होके शायद छूट जाता। बस इसी डर के मारे मुझ में चौगुना जोश आ गया था। साहब के इतने घूंसे लगे कि वे नशे में होगये और नीचे से बोले 'दैटिल डू' That will do अर्थात् बस करो। भाई बस। मैं उन दिनों अंगरेज़ी बिलकुल नहीं समझता था। मैं नहीं समझा कि 'दैटिल डू' क्या होता है? मैं इस का तात्पर्य यही समझा कि अभी इसमें बल है। बस फिर मैंने दाहिने हाथ के घूंसे जमाना प्रारम्भ किया। अब की बार ओवरसियर साहब ने हाथ हिला कर कहा Boy! no नो के मानी मैं समझ गया और मैंने उसे छोड़ दिया। तत्पश्चात् मैंने उससे कहा "अगर तुमने नालिश की तो समझ लेना जान से मार डालूंगा"। वह ओवरसियर टूटी फूटी हिन्दी बोल लेता था और थोड़ा समझ भी लेता था। उसने मुझ से कहा कि यह बात किसी से कहना नहीं। मैं उसका अभिप्राय समझ गया। बात यह थी कि अगर उस कोठीवाले को ख़बर लग जाती कि गोरा एक कुली से पिट गया है तो वह गोरे को निकाल देता और यह कहता कि जो आदमी १०० कुलियों से काम लेने के लिये रक्खा गया है यदि वह एक से पिट गया तो वह नौकरी के योग्य नहीं। मैंने भी सिर हिला दिया कि मैं

नहीं कहूंगा। फिर ओवरसियर साहब ने कहा "आज से हम तुम Friend (दोस्त) हुए।" यद्यपि मैं उसकी भाषा नहीं समझता था पर उसकी आकृति और कहने के ढङ्ग से उसका भाव समझ लेता था। और वह दो चार अशुद्ध हिन्दीके शब्द बोलता था उन्हें मैं अच्छी तरह से समझ लेता था। फिर उस ने अपने पास से कई पैंस देकर नारियल मंगाये और एक नारियल मेरे हाथ में दिया कि इसको तोड़कर इसका पानी पिओ और एक अपने हाथ में लिया। पीते वक्त ओवरसियर साहब ने कहा "Good luck" गुड लक। मैं समझा तो नहीं परन्तु मुझे उसके चेहरे को देखकर हँसी आई और मैंने कहा कि आज तो साहब समझ गया होगा कि 'गुड लक' कैसा होता है?

कोठी में डाक्टरी परीक्षा

एक बार एक डाक्टर साहब परीक्षा लेने के लिये आये। मैंने सोचा कि यदि कहीं इन्होंने मेरे लिये Full task लिख दिया तो बस काम करते करते दम निकल जावेगा। कई सौ मजदूर डाक्टर साहब को घेर कर खड़े होगये और डाक्टर साहब अपनी Stethoscope लगाकर जांच करने लगे। जब मैंने देखा कि मेरे नाम के पुकारे जाने में थोड़ी देर है। मैं एक फर्लाङ्ग दूर चला गया और वहां से भागता हुआ आया।

डाक्टर साहब ने मुझे भागते हुए नहीं देख पाया क्योंकि वहां भीड़ बहुत थी। मेरा नाम पुकारा गया मैं हाज़िर हुआ। मेरा दिल दौड़ने के कारण धड़कने लगा था। ज्यों ही Stethoscope लगाई गई त्योंहीं डाक्टरने कहा "क्या तुम्हें कोई बीमारी होगई है?" मैंने कहा "मुझे दमा होगया है।" डाक्टर ने कहा।कलकत्तेवाले डाक्टर ने तो यह लिखा ही नहीं कि तुम्हें दमा है।" मैंने कहा "उन दिनों मेरी बीमारी दबी हुई थी और मुझे बहुत कुछ सेहत थी। अब दमा फिर उखड़ आया है।" डाक्टर साहब बातों में आगए और उन्होंने Half task आधा काम लिखा दिया।

इस प्रकार मुझे झूठ बोलना पड़ा। अगर मैं चालाकी न चलता तो मेरे नाम पूरा काम लिखा जाता और काम करते २ मेरे प्राण जाते, जेलखाने में पड़ा २ भूखों मरता और ओवरसियरों की मार खानी पड़ती सो अलग। अस्तु, मैं मर्त्यलोक के यमराज ओवरसियर की मार से एक प्रकार बच गया, अब यमलोक के यमराज मुझे इस झूठ बोलने के लिये भलेही दण्ड दें मैं उसे सहर्ष सह लूंगा। मैं आधा काम करता था और ६ पैंस रोज कमाता था। ५ वर्ष तक मुझे जो २ कष्ट भोगने पड़े उन्हें मैं ही जानता हूं। पांच वर्षबाद जब मैं Free (स्वतन्त्र) हुआ तो मेरे ऊपर १५ शिलिंग का क़र्ज़ था। लीजिये पाठक! मैंने ५ वर्ष तक कठिन परिश्रम करके और

भूखों मरके क्या कमा पाया ! केवल मैं ही नहीं हमारे सैकड़ों भाई जो गिरमिट से छुटकारा पाते हैं तो उनके पास एक कौड़ी भी नहीं होती । हां दो चार आदमी भलेही ऐसे निकलें जो गिरमिट में काम करके दस पांच रुपये प्रति वर्ष बचालें स्वतन्त्र होने पर मैंने कुछ पौण्ड उधार लेकर थोड़ीसी ज़मीन पट्टे पर जमीन ली और गन्ने की खेती करने लगा । जब मुझे खेतीमें कुछ लाभ हुआ तो मैंने सोचा कि अब घर चिट्ठी भेजनी चाहिये । मैंने बीच में चिट्ठी यह सोच कर न भेजी थी कि यदि मेरे घरवालों ने मेरे कष्टों का वर्णन पढ़ा तो वे घबड़ा जावेंगे । जब फ़िजी में आये हुए मुझे ८ वर्ष होगये तो मैंने एक पत्र अपने भाई को, जो कलकत्ते में मुनीमगीरी करता था भेजा । इस पत्र में मैंने विस्तार पूर्वक उन सब कष्टों को वर्णन किया था जोकि मुझे फ़िजी में गिरमिट में काम करनेमें सहने पड़े थे ।

मैं अपने हृदय में विचार करता था कि मेरा भाई मेरा पता पाकर बड़ा प्रसन्न होगा । जब पत्र को भेजे हुए १॥ महीना होगया तो उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा । अन्तमें एक पत्र कलकत्ते से आया ज्योंही मुझे पत्र मिला मुझे बड़ी उत्कंठा उसके खोलनेकी हुई । पत्र खोलते ही मैंने पढ़ा "तुम्हारे भाई ने ज्यों ही तुम्हारे कष्टों का विवरण पढ़ा कि उसके दिल में बड़ा धक्का लगा और उसे बड़े ज़ोर से बुख़ार चढ़ आया

दो दिन तक बराबर बुख़ार चढ़ा रहा तीसरे दिन अकस्मात् उसका देहान्त होगया इस हृदय-विदीर्णकारी समाचार को सुनकर मुझे दुःख हुआ और मुझे बाल्यकाल की सब घटनायें एक २ करके स्मरण आने लगी, जब कि मैं अपने भाई के साथ भोजन किया करता था जब मैं उन कष्टों का स्मरण करता हूं जो कि उस दुष्ट आरकाटी के कारण मुझे सहने पड़े तो मेरे हृदय के घाव पुनः हरे होजाते हैं और मेरे मुख से सहसा यही शब्द निकलते हैं। हा! परमात्मन् यह कुली प्रथा कब बन्द होगी और इन धूर्त आरकाटियों से हमारे भाइयों का कब पिंड छूटेगा।

इधर जब मेरी माँ को मेरा कुछ समाचार न मिला तो उसे बड़ीभारी चिन्ता हुई। गांव के लोग कहते हैं कि एक बार एक साधू लड़का मेरे ग्राम हिरनगौ में आया। कहा जाता है कि उस लड़के की सूरत कुछ मुझ से मिलती जुलती थी। ज्योंहो तेरी माँ ने सुना कि कोई साधू मेरी शकल का आया हुआ है त्योंही वह उस साधु के पास गई और दौड़कर उसे पकड़ लिया और कहने लगी बेटा क्यों साधू होगया है? अब तो अपनी दुखित माँ पर दया कर और जटा मुड़ा कर अपने घर में रह।' उस साधू ने कहा 'मां! मैं तेरा लड़का नहीं हूं। मैं ब्राह्मण नहीं हूं, मैं तो क्षत्रिय हूं। पर मेरी माँ का मस्तिष्क मेरे याद करते २ इतना विचलित होगया था कि वह साधु

की बात पर विश्वास ही नहीं करती थी। आख़िरकार वह साधू तङ्ग होकर मेरे गांव से भाग गया।

कोई दो वर्ष परिश्रम करके मैं ने जङ्गलियों की भाषा पढ़ी और उसे अच्छी तरह समझने और बोलने लगा। एक वर्ष तक मैंने बढ़ई का काम सीखा तदन्तर Coppersmith का भी काम मैंने बहुत दिनों तक सीखा था। फ़ोटो लेना मैंने इस उद्देश्य से सीखा था कि मैं खेतों पर भारतीय मनुष्यों के चित्र लूं। मैंने छिप कर ऐसे कितनेही चित्र लिये थे जिनमें गोरे लोग भारतीय स्त्रियों और पुरुषों को पीट रहे थे। मेरा विचार इन चित्रों को सरस्वती मासिक पत्रिका में छपवाने का था। लेकिन एक दिन जब मैं सूवा शहर को गया हुआ था तो एक अपरिचित मनुष्य बनावटी चिट्ठी मेरे नाम की लेकर आया और सब तसवीर मांगकर लेगया। घर आकर मैंने चिट्ठी पढ़ी तो उसकी लिपि कुछ मेरी लिखावट से मिलती थी। इसी से उसका दाँव चल गया। मैंने बहुत चाहा कि मामला चलाऊं परन्तु वह मनुष्य लापता होगया और मुझे स्वदेश को आना था इसलिये मैं चुप होगया। तसवीर जाने के दो दिन बाद मुझको एक सरकारी सिपाही ने आकर हुक्म सुनाया कि आज से किसी खेत में कम्पनी या कोठी वालों के मज़दूरों की तसवीर न खींचना। अगर उदूल हुक्मी करोगे तो अभियोग चलाया जायगा और सज़ा होगी।

यह तो पहिले लिख चुका हूं कि मैं खेती करने लगा था। एक बार सन् १६१० ई० में जब कि मेरी गन्ने की खेती तैयार थी एक बड़ा भारी तूफ़ान आया और मेरी तमाम खेती नष्ट होगई। तत्पश्चात् मैंने फिर उधार लेकर कार्य आरम्भ किया। परमेश्वर की कृपा से फिर थोड़ा बहुत लाभ होने लगा।

मैं प्रायः यह किया करता था कि अपना कामअपने नौकरों पर छोड़ कर कोठियों में जाया करता था और वहाँ अपने भारतीय भाइयों की दशा जाकर देखा करता था और उन्हें उनकी भलाई के लिये सम्मति दिया करता था। फ़िजी की बीसियों कोठियां मैंने स्वयं जाकर देखी थीं और समाचार ब्रिटिश इण्डियन ऐसोसियेशन को दिये थे। उपरोक्त सभा भारतीय भाइयों के दुःख निवारणार्थ यथाशक्ति प्रयत्न करती थी। सभा का पत्रव्यवहार मैं हिन्दी में किया करता था।

कोठीवाले कितनेही गोरे मुझ से इतने नाराज़ होगये थे कि कितनी कोठियों में मेरा जाना बन्द करवा दिया था। जिन कोठियों में मैं अपने भारतीय भाइयों से मिलने जाता था वहीं से वे मुझे निकलवाने का यथा शक्ति प्रयत्न करते थे। एक बार मैं एक कोठी में घूमते २ पहुंचा। कोठी के भीतर घुसने की तो मुझे आज्ञा नहीं थी अतएव मैं सड़क के किनारे बैठकर ज़ोर से भजन गाने लगा। भजन गाने का मेरा उद्देश्य

यही था कि जब कोई गाना सुनेगा तो अवश्य मेरे पास मेरा गाना सुनकर कितने आदमी कोठी बाहर सड़क पर मेरे आवेगा निकट आ गये। मैंने गाना बन्दकर उनसे बात-चीत करना प्रारम्भ किया। बातें करते २ मेरी दृष्टि एक मुसलमान युवती पर पड़ी। उसकी आकृति को देखकर यह ज्ञात होता था कि मानो यह अभी रोये देती है। उस स्त्री की छोटी लड़की उसके निकट खड़ी हुई थी मैंने उस स्त्री से पूछा "क्या तुम्हें कोई विशेष दुःख है? यह सुनते ही उस स्त्री की अश्रुधारा बहने लगी और उसने रोते रोते मुझे अपना हाल सुनाना प्रारम्भ किया। उसने कहा "मेरा नाम ललिया है और मेरे पति का नाम इस्माइल। कई वर्ष हुए जब मैं अपने पति के साथ कानपुर में रहती थी। मेरा पति स्टेशन से यात्रियों का बोझा ढोया करता था और इस तरह आठ दस पैसे जो कमाता था उसमें हम तीनों यानी पति, मैं और यह छोटी लड़की गुज़र करते थे। एक दिन मेरा पति मज़दूरी करने के लिये गया हुआ था मैं घर पर थी। इतने में एक आदमी मेरे घर पर आया और उसने मुझ से कहा 'तुम यहां बैठी हो ये तुम्हारे और वहां मालिक के बड़ी चोट आगई है, वह कई सन्दूक लिये जा रहा था कि सन्दूक उसके पांव पर गिर पड़े और कई जगह बड़ी भारी चोट पहुंची। अगर तुम उसे देखना चाहो तो मेरे साथ चलो। मैं घबड़ा गई और उसके

साथ चलने को राज़ी होगई। वह मुझ लेकर एक बड़े मकान के दरवाज़े पर पहुंचा मुझ से कहा देखो इसी में तुम्हारा मालिक है, यह डाक्टर साहब का मकान है। बिना डाक्टर साहब की आज्ञा के इसमें जाना ठीक नहीं थोड़ी देर ठहरो अभी डाक्टर साहब आते होंगे थोड़ी देर बाद ही एक आदमी कोट पतलून पहिने चश्मा लगाये आ पहुंचा। जो आदमी मुझे घर से लिवा लाया था उसने डाक्टर साहब से कहा 'देखिये डाक्टर साहब यह उसी आदमी की औरत है जिसका कि आप इलाज कर रहे हैं। यह अपने मालिक से मिलना चाहती है।' डाक्टर साहब ने कहा "अभी हम नहीं मिलने देगा। कैसे अहमक हो समझते नहीं इस वक्त उसके दिल पर बड़ीभारी चोट हैं। उसकी जान आफ़त में हैं। यदि उसने अपनी औरत को देखा तो इसमें शक नहीं कि उसका जान निकल जावेगी और इस औरत को भी बहुत घबड़ाहट होगी। अभी चार पांच दिन उसका इलाज हम करलें फिर उससे मिला लेना कहीं भागा नहीं जाता है।" पहिले आदमी ने कहा "हुजूर इसके पास कुछ खाने को नहीं है यह कहां जावे?" डाक्टर साहब ने कहा "अच्छा इसका और इसकी लड़की का यहीं खाने का इन्तिज़ाम करदो।" इस प्रकार मैं अपनी इस छोटी लड़की के साथ वहां रह गई। १० दिन तक वह आदमी मुझे बहकाता रहा कि अब तुम्हारे मालिक को

सेहत होरही है, आज नहीं कल उससे मिलना। दस दिन बाद फिर वेही डाक्टर साहब आये। मैंने उनसे अर्ज़ की कि मुझे मेरे मालिक से मिला दो। डाक्टर साहब बोले "तुम अभीतक यहीं बनी हो वह तो कोई चार पांच दिन हुए हमारे शफ़ाख़ाने से चला गया। हम ने बहुत कहा कि अभी आराम नहीं हुआ ठहर जा पर उसने कहा कि मेरे बालबच्चे भूखों मरते होंगे मैं नहीं ठहरूंगा" इसलिये नाउम्मेद होकर मैं वहां से निकल आई। मार्ग में तीन आदमी दूर दूरपर खड़े हुए मुझे मिले। पहिले आदमी ने कहा कहां जाती हो? किस तलाश में हो? मैंने सारा किस्सा कह सुनाया। उस आदमी ने कहा तुम्हारे आदमी का नाम इस्माइल था। मैंने कहा हां तब उसने बड़े अचम्भे के साथ कहा "अरे वह तो कल कत्ते भेज दिया गया उसे आरकाटी ने बहका दिया था। मैं बड़ी घबड़ाई। थोड़ी दूर पर दूसरे आदमी ने भी ये ही बातें कहीं आगे चलने पर तीसरे आदमी ने कहा "पीछे तुम्हारा पति अपने घर पर आया था उसे तो आरकाटी ने बहका दिया कि तेरी स्त्री कलकत्ते भेज दी गई इसलिये वह तो कलकत्ते गया। अगर तुझे उस से मिलना हो तो जल्दी तू भी कलकत्ते जा। मैं कलकत्ते जाने पर राज़ी होगई। उस आदमी ने मुझे बहुत से आदमियों के साथ जो कलकत्ते आ रहे थे भेज दिया। जब मैं कलकत्ते की डिपो में पहुंची तो मुझे पता लगा

कि मेरा मालिक तीन दिन हुये फ़िजी में भेज दिया गया। इसके बाद मैं भी इस लड़की के साथ यहां भेज दी गई। आज तीन वर्ष हो गये। मैं इस कोठी में काम करते २ मरी जाती हूं मुझे नहीं मालूम मेरा मालिक कहां है। मैं तुम्हारा बड़ा अहसान मानूंगी अगर तुम उस से मुझे मिला दो। इतना कह कर वह स्त्री फूट २ कर रोने लगी। और उस की लड़की भी अब्बा अब्बा कह के रोने लगी। मैंने उससे कहा बेटी! तुम मुझे अपने मालिक का नाम, अपनी सास ससुर वग़ैरह का नाम और अपना सब हाल लिखवादो, मैं तुम्हारे मालिक को तलाश करूंगा। मैंने अपनी डायरी में उसका सब हाल लिख लिया और उसे तसल्ली देकर मैं स्टीमर पर सवार होकर कई घण्टे के बाद सूवा आ पहुंचा। सूवा आते ही मैं एजेण्ट जनरल के पास गया और मैंने उन से प्रार्थना की कि कृपया आप अपने आफ़िस के क्लर्क से कह कर एक सूची बनवा दीजिये जिसमें कि गत तीन वर्ष में आए हुए इस्माइलों की कोठियों के पते हों एजेण्ट जनरलने मुझसे कहा "हम यह काम करवाने का तुम्हारा नौकर नहीं है"। मैंने एक व्यक्ति से सुना कि एक कोठी में इस्माइल नामक एक पुरुष है मैं ने पहिले उसी कोठी में जाने का निश्चय किया जब मैं उस कोठी में स्टीमर पर सवार हो कर पहुंचा तो मैंने इस्माइल को बुलवाया और सामने खड़ा कर मैंने

उसकी स्त्री के विषय में पूछा। इस्माइल के मुख कर कुछ पसीना आ गया और वह घबड़ा कर बोला "मेरी औरत ललिया थी।" मैंने उस से कह दिया कि तुम्हारी औरत अमुक कोठी में जो यहां से ५०० मील पर है, काम करती है मैं तुम्हारी ओर से एक अर्ज़ी १५ दिन की छुट्टी के लिये एजेण्ट जनरल के नाम लिखे देता हूं तुम इस पर अपने दस्त-खत करो। अर्ज़ी लिख कर मैंने अपने साथ ली। तदनन्तर नाव पर सवार हो मैं उस कोठी में पहुंचा जहां कि ललिया काम करती थी। जब मैंने उससे यह हाल कहा तो उसे बड़ी प्रसन्नता हुई और प्रसन्नता के कारण उस की आंखों में आंसू आगये। मैंने उसकी ओर से भी एक अर्ज़ी एजेण्ट जन-रल के नाम लिखी। दोनों अर्ज़ी ले कर मैं एजेण्ट जनरल के पास गया। एजेण्ट जनरल बड़ा नाराज़ हुआ और उसने कहा "जाओ हम नहीं जानटा कोठी वाला जाने।" मैं बड़ा हैरान था कि क्या करूं। अंत में मैंने सोचा चलो कोठीवाले के पास ही चलें और उसी से छुट्टी के लिये कहें। तत्पश्चात् मैं ललिया को ले कर कोठी वाले के पास गया। कोठी वाले ने हम दोनों को फटकार कर कहा "मानते ही नहीं क्यों मुझे तंग करते हो! हमारा काम सफ़र करेगा। "...............
गन्ना कटने के लिये तयार है। जाओ हम छुटी नहीं देगा।" मैं लौट आया और मैंने विचार किया कि किसी दूसरी तर-

कीब से अभी छुट्टी दिलवाऊंगा। इधर क्या हुआ इस्माइल काम करते २ और अपनी स्त्री व लड़की की फिक्र से बीमार पड़ गया। उस ने अर्ज़ी दी वह अस्पताल भेज दिया गया। अस्पताल के डाकूर ने उसे काम पर वापिस कर दिया और लिख दिया इसे कोई रोग नहीं बहाना बनाता है। बिचारा फिर काम पर वापिस आया। अबकी बार उसकी तबियत और भी ज्यादः ख़राब होगई। वह अस्पताल फिर भेजा गया बड़े डाकूर ने उसे देखा और लिख दिया "इस को कोढ़ की बीमारी है यह बहुत कमज़ोर है इससे काम नहीं होगा। अगर बैठे २ इस को तनख्वाह देना चाहते हो तो भले ही बेहतर तो यह होगा कि इसे इण्डिया को वापिस भेज दो। जहाज़ चौदह या पन्द्रह दिन में जानेवाला है।" कोठी के मालिक ने यही विचार कर लिया कि इसे शीघ्र ही हिन्दुस्तान भेजना चाहिये। जब मुझे यह ख़बर लगी तो मैं फिर उस अस्पताल में पहुंचा। मैंने इस्माइल से पूंछा तो उसने कहा कि डाकूर के कहने के मुताबिक़ ये मुझे ज़बरदस्ती अभी हिन्दुस्तान भेजनेवाले हैं। अब मैं अपनी औरत से कैसे मिलूंगा? मैं ने सोचा कि यह बड़ा अनर्थ हुआ। मैं झटपट ही एक बैरिस्टर के पास गया और मैं ने उसे दो गिन्नी अपने पास से इसलिये दीं कि किसी तरह प्रयत्न करके इसे अभी हिन्दुस्तान जाने से रोक लिया जावे। बैरिस्टर साहब

ने प्रयत्न करके पूंछपाछ की और कहा कि अब तो उसका जाना निश्चित हो गया। अब क्या हो सकता है जहाज़ छूटनेवाला था। मैं वहां से चलकर जहाज़ के निकट आया देखा तो इस्माइल जहाज़ में सवार पाया। इस्माइल की हार्दिक अभिलाषा थी कि वह अपनी स्त्री से मिले। भारतवर्ष को जहाज़ छूटते वक्त इस्माइल के नेत्र अश्रुओं से परिपूर्ण थे। यद्यपि असह्य दुःख के कारण मुझ से वह कुछ कह नहीं सकता था पर उसकी आकृतिसे दुःख टपकता था। मुझे भी उस समय हार्दिक खेद था। मैंने दिल में सोचा कि मेरा प्रयत्न सब व्यर्थ गया और मैंने, ललिया से जो प्रतिज्ञा की थी उसे मैं पूरी न करसका। मैंने जहाज़ के एक खल्लासी से कह दिया था कि इस्माइल को देख भाल रखना। यह बीमार है इसे यथाशक्ति सहायता देना। जहाज़ रवाना होगया मैं 'हरेरिच्छा बलीयसी' कह के घर लौट आया। जब वह जहाज़ भारतवर्ष से फ़िजी लौटा तो उस खल्लासी ने मुझ से कहा कि हिन्दुस्तान की ज़मीन पर पैर रखते ही कलकत्ते में इस्माइल की मौत होगई। मुझे यह सुनकर बड़ा खेद हुआ मैं सोचने लगा कि यह समाचार मैं ललिया को कैसे सुनाऊंगा। वह इस्माइलसे मिलने की राह देखती होगी। मैं कड़ा दिल करके ललिया की कोठी को रवाना हुआ। वहां पहुंच कर पहिले तो मैंने उस से कहा कि तुम्हारा पति हिन्दुस्तान

भेज दिया गया। वह फूट फूट कर रोने लगी। मैंने तसल्ली देकर कहा अब तुम्हारे गिरमिट के थोड़े दिन बाक़ी हैं तुम्हें भी हिन्दुस्तान चार महीने बाद भिजवा देंगे। दूसरे दिन इतवार को मैंने उसकी मृत्यु का हाल सुना दिया। सुनते ही ललिया को मूर्च्छा आगई और वह बीमार पड़ गई, बड़ी कठिनाई से १५ दिन में उसे थोड़ा बहुत आराम हुआ। अपने दुःख को वह स्वयं ही जानती थी। इस दुर्दशामें भी कोठी-वाले उससे बराबर काम लेते रहे। धिक्कार है सहस्रवार ऐसे पौण्ड, शिलिङ्ग और पेंसों पर जिनके लिये प्लैण्टर लोग मनुष्य जाति पर ये अत्याचार करते हैं !!! ये अर्थ-पिशाच और धनलोलुप प्लैण्टर कहते हैं।

Material resourses of the colonies cannot be developed without these labourers."

अर्थात् बिना इन मज़दूरों के उपनिवेशों के द्रव्यसाधनों में उन्नति नहीं हो सकती। हमारी समझ में मनुष्यों को दासत्व शृङ्खला में बांधने से यह लक्ष गुणा उत्तमतर है कि उपनिवेश ऊजड़ व कंगाल बने रहें।

आस्ट्रेलिया की सैर

हम लोगों में बहुत से ऐसे होंगे जो यह भी न जानते होंगे कि आस्ट्रेलिया में सौ दो सौ भारतवासी रहते हैं या

नहीं। इस बात का कारण हमारे अनुत्साह के सिवाय और क्या हो सकताहै। हम लोगों के हृदय में इस बात की इच्छा ही उत्पन्न नहीं होती कि दूसरे देशों में रहने वाले अपने भारतीय भाइयों के विषय में कुछ जानने का प्रयत्न करें। और न हो तो सैर करने के लिये ही हम में से दस पांच आदमियों को ऐसे द्वीप द्वीपान्तरों में जाना चाहिये जहां कि भारतवासी बसे हुये हैं। हमारे यहां के राजा महाराजा और सुशिक्षित धनवान पुरुष भी जब सैर करना चाहते हैं तो सीधे इङ्गलैण्ड या फ्रांस को चल देते हैं।

एक बार सैर करने के लिये मैंने आस्ट्रेलिया जाने की इच्छा की Australion Common-wealth से मुझे आज्ञा लेनी पड़ी, मैं सिडनी पहुंचा। तत्पश्चात् मैं वहांके एक होटल में चला गया और सात शिलिंग दे कर वहां ठहर गया। गोरे लोगों से अलग मुझे एक कमरा दिया गया मैं उस कमरे में जा कर लेट रहा। मेरे पहुंचते ही वहां हल्ला होगया 'काला आदमी आया है' बस फिर क्या था कितनी ही स्त्रियां और पुरुष मुझे देखने के लिये मेरे कमरे पर आये। भीड़ के मारे मेरी तबियत हैरान थी। मेरे विषयमें कोई कुछ कहता था कोई कुछ, एक स्त्री मुझ से बोली "All black, have you got no soap" पर मैंने उस की बात का उत्तर देना ठीक न समझा। मुझे इस बात का डर था

कि अगर कहीं इन लोगों को यह ज्ञात हो गया कि मैं थोड़ी अंगरेज़ी बोल और समझ सकता हूं तो ये बातें पूंछते २ मेरा पिंड न छोड़ेंगे। मैं ने एक साथ ज़ोर से फ़िजियन भाषा में कहा "लाको सालेबू न औसो ज्यौसो" अर्थात् चले जाओ कोठरी बहुत भर गई है। यह सुन कर बहुतसे पुरुष चले गये लेकिन तब भी कितनी ही स्त्रियां वहीं खड़ी रहीं। मुझे प्यास लगी तो मैं ने अपना लोटा बेगमें से निकाला। लोटे को देखते ही वे चिल्लाने लगीं Come, come, look at this water pot यह आवाज़ सुनकर और भी भीड इकट्ठी हो गई। भीड़ मेंसे एक स्त्री बोली यह मंजता है दूसरी बोली यह कभी नहीं मांजा जाता, इतने में एक तीसरी स्त्री उसे उठा ले गई और न्हाने के साबुन से उसे साफ़ करने लगी। भला न्हाने के साबुन से लोटा किस तरह साफ़ हो सकता था? तदनन्तर किसी अन्य स्त्री ने कहा कि इस में Send soap बालू का साबुन लगाओ ऐसा किया जाने पर वह लोटा साफ़ होगया। इसके बाद मैंने पाखाने जाना चाहा और मैं लोटा लेकर चलने लगा तो फिर सब को आश्चर्य हुआ। जब मैं पाखाने से लौटा तो होटल की मैनेजर स्त्री ने कहा 'You have spoiled our latrine.' मैंने क्रुद्ध होकर कहा 'Then give me back my seven shillings, I will not stay here.'

मैं ने सोचा कि यहां रहने से बहुत सी असुविधायें होंगी

चलो किसी हिन्दुस्तानी भाई के यहां चल कर ठहरें।

यहां पर दो चार बातें आस्ट्रेलिया प्रवासियों के विषयमें कहना अनुचित न होगा। आस्ट्रेलिया में कोई ६६४४ भारतवासी हैं। आस्ट्रेलिया में अब और भारतवासी नहीं बसने पाते। Education test जिसका कि आविष्कार नेटाल ने किया था, आस्ट्रेलिया में भी प्रचलित है। आस्ट्रेलियन अफ़सर नये आनेवाले भारतवासी की परीक्षा लेते हैं कि वह अंगरेजी पढ़ लिख सकता है या नहीं, और ज़बरदस्ती भारतवासियों को फ़ेल कर देते हैं और आस्ट्रेलिया में नहीं घुसने देते। यह मुफ़्त की परीक्षा देते समय परीक्षा देनेवालों के जो हार्दिक भाव होते हैं उन्हें वे ही अच्छी तरह जान सकते हैं जिन्होंने कभी इस तरहकी परीक्षा दी हो। आप उस मनुष्य की स्थिति पर तो ध्यान दीजिये जो कि सात समुद्र पार से अनेकों कष्ट सहता हुआ बहुत कुछ रुपया खर्च करके, आया हो और फिर परीक्षा में फ़ेल करके वापिस कर दिया जावे। क्या ही अच्छा हो यदि 'दुष्टं दुष्टवदाचरेत्' की नीति से भारतवर्ष में आने वाले आस्ट्रेलियन लोगों की हिन्दी में परीक्षा ली जावे।

लेकिन यह ख़ैरियत है कि आस्ट्रेलियन लोग दक्षिण अफ़्रीकावालों की तरह बहुत निर्दयी नहीं हैं जो ६६४४ भारतवासी इस समय आस्ट्रेलियामें बस गये हैं उन पर आस्ट्रे-

लियन सरकार अत्याचार नहीं करती। यद्यपि आस्ट्रेलियामें नये भारतवासी नहीं बसने पातेपर सैर करनेके लिये या जल वायुके परिवर्त्तनके लिये मैलबोर्न नगरके Department for External Affairs(वैदेशिक विभाग)से आज्ञा मिल जाती है। परन्तु इस में भी एक बड़ी बाधा है वह यह कि १०० पौंडकी ज़मानत देनी पड़ती है। जो भारतवासी आस्ट्रेलिया में बस गये हैं उन में अधिकतर पंजाबी, सिख, और पठान हैं। सिख लोग ज्यादातर गेंहू की खेती करते हैं और पठान लोग ऊंट रखते हैं पढ़े लिखे ये लोग बिल्कुल नहीं। परन्तु हर्ष की बात है कि ये लोग यूरोपियन लोगों की तरह ज़मीन व घर ख़रीद सकते हैं, राजनैतिक अधिकार भी उनको प्राप्त है, चुंगी की मेम्बरी के लिये वोट भी दे सकते हैं। सर्वसाधारण की संस्थाओं में जा सकते हैं और होटलों में ठहर सकते हैं पुलिस भी उन पर कोई विशेष अत्याचार नहीं करती।

पहिले कुछ नीच जाति के गोरों ने भारतवासी सिक्खों और पठानों से छेड़ छाड़ की थी परन्तु जब उस के प्रत्युत्तर में भारतवासियों ने दो चार डंडे जमा दिये तो फिर छेड़ने का साहस उनमें न हुआ। आस्ट्रेलियन लोगों में प्रायः यह भाव प्रचलित हो गया है कि भारतवासी बड़ी जल्दी क्रुद्ध होजाते हैं और लाठी ले कर सीधे हो जाते हैं इसलिये इन से छेड़छाड़ करना ठीक नहीं। कुछ भी क्यों न हो हम यह

अवश्य कहेंगे कि प्रायः आस्ट्रेलियन लोग दक्षिण अफ्रीका-वालों से हमारे साथ बर्त्ताव करने में कई गुने अच्छे हैं। हां एक बात बड़े आश्चर्य की है वह यह कि आस्ट्रेलियन लोग इस बात पर कोई आपत्ति नहीं करते कि हिन्दुस्तानी पुरुष आस्ट्रेलियन स्त्रियों से विवाह करें। उनकी पालिसी यह है कि चूंकि हिन्दुस्तानी आस्ट्रेलिया में रुपया कमाते हैं। इस लिये उन्हें उस रुपये को यहीं खर्च करना चाहिये।

आस्ट्रेलियन औरतें बड़ी ख़र्चीली होती हैं और जो कोई उन से विवाह करता है तो उस की आय का अधिकांश मैमसाहब ही ख़र्च कर डालती हैं। पठान लोगों ने ही अधिकतर आस्ट्रेलियन स्त्रियों से विवाह किया है, और थोड़े बहुत सिख भी ऐसे हैं जिन्होंने कि इन स्त्रियों के साथ शादी की है। इन स्त्रियों को अथवा इनकी सन्तति को ये लोग आस्ट्रेलिया से किसी दूसरी जगह नहीं ले जासकते। आस्ट्रेलियन सरकारकी यह बात न्यायसङ्गत नहीं है। यह बात सच है कि हमारे देश के लोगों ने नीच जाति की ही आस्ट्रेलियन से स्त्रिय विवाह किया है, पर इससे यह अवश्य प्रगट होता है कि आस्ट्रेलियन लोग काले रंग से बहुत घृणा नहीं करते।

होटल से मैं चला आया और किसी हिन्दुस्तानी का घर तलाश करने लगा। अकस्मात् मुझे एक जानता पहिचानता अंगरेज़ मिल गया जो कि फ़िजी में काम करता था। वह

मुझे सिडिनी से १५ मीलकी दूरी पर लेगया और मुझे मेवाराम नामक एक पञ्जाबी जाट का घर दिखला दिया। मेवाराम जी के दरवाज़े पर मैं गया। मेवाराम जी से मैंने सारा हाल कह सुनाया। उन्होंने मेरा बड़ा आदर सत्कार किया। मेवाराम जी ने एक आस्ट्रेलियन स्त्री से विवाह कर लिया था और वे मिस्टर मेव के नाम से पुकारे जाते थे। मेरे लिये मेवाराम जी ने दो तीन शिलिङ्गके सेब और अंगूर ला दिये। भूखा तो मैं था ही, खा कर ख़ूब सोया। कई दिन मैं मेवाराम जी के यहां रहा। फिर सिडनी इत्यादि की सैर करता हुआ मैं स्टीमर द्वारा फ़िजी को चला आया।

फ़िजी में अब कैसे भारतवासियों के जाने की आवश्यकता है?

कुली बनकर शर्तबन्दी में तो वहां एक भी भारतवासी कभी भी न जाना चाहिये पर यदि कोई अपना ख़र्चा करके जाना चाहें तो जा सकते हैं। जो आदमी लुहारी का काम जानते हों या घोड़ों के नाल लगाना जानते हों, उनकी गुज़र वहां बहुत अच्छी तरह होसकती है। ऐसे आदमी तीन रुपये रोज़ कमा सकते हैं। फ़िजी में Surveyor सर्वेयर लोगों की बड़ी ज़रूरत है। निस्सन्देह सर्वेयरों को वहां ख़ूब पैदा हो सकती है। वकील बैरिस्टर भी वहां जाकर अच्छी आमदनी पैदाकर

सकते हैं। लेकिन जो वकील या बैरिस्टर स्वार्थी हों और रुपया कमाना ही जिनके जीवन का लक्ष्य हो वे फ़िजी को न जावें, क्योंकि फ़िजी में तो मणिलाल जी के समान के वकीलों व बैरिस्टरों की आवश्यकता है। सब से ज्यादः ज़रूरत फ़िजी में हिन्दुस्तानी डाकृरों की है। यदि भारतवर्ष से कोई डाकृर वहां चले जावें तो अपने भाइयों को बड़ी सहायता पहुंचेगी। जो बैरिस्टर वहां जाना चाहें तो उनको सार्टीफ़िकट अपनी डिग्रीका साथ लेजाना चाहिये। जिनको भारतीय भाइयोंके साथ हार्दिक प्रेमसे वर्त्तने और उनके आन्तरिक दुःखों के विमोचनके उपाय सोचनेमें जमुहाई आवे तो उन महाशयोंको वहां जाना भी उचितनहीं है। जिनके हृदय में शान्ति, दया, क्षमा, परोपकार, देशसेवा, दीनों का उद्धार ये गुण बस रहे हैं उन्हीं से प्रवासी भाइयों का उद्धार हो सकता है। जिन को टका हाय टका! अरे!! टका! हायरे टका! इसी धुन के सिवाय और कुछ नहीं सूझता वे महाशय कृपा करके फ़िजी न जावें।

धन्य हैं वे लोग जो स्वार्थ को त्याग कर प्रवासी भाइयों के दुःख में भाग ले रहे हैं और कुटुम्ब से मोह तोड़ चन्द्रमुखी के प्रेम से अलग हो टापुओं में जाकर अपने भाइयों को धैर्य्य दे रहे हैं। क्या आप भी उन महाशयों का अनुकरण कर सकते हैं?

इन लोगों के जाने से फ़िजी के दुःखित भारतीय लोगों के बहुत कुछ कष्ट दूर होजावेंगे। फ़िजी के वर्त्तमान गवर्नर Sir Bickham Sweet Escott बड़ेही उदार और न्याय-प्रिय हैं और हम यह बात निस्सन्देह कह सकते हैं कि ऐसा अच्छा गवर्नर फ़िजी में कभी नहीं आया। गवर्नर साहब कहते हैं "हमारी हार्दिक इच्छा है कि फ़िजी के भारतवासी सुशिक्षित होजावें और यहां के राज्य सम्बन्धी कार्यों में भाग लेने लगें।" फ़िजीकी उन्नति विशेषतया वहां के भारतवासियों की उन्नति पर निर्भर है क्योंकि जो वहां के आदिम निवासी हैं वे धीरे धीरे नष्ट होते जाते हैं। वहां ४०००० भारतवासी हैं जो वहां के यूरोपियन लोगोंकी संख्या से १२ गुने हैं। भारतवर्ष के किसी बन्दरगाह से न्यूज़ीलैण्ड या आस्ट्रेलिया होते हुए फ़िजी जा सकते हैं आस्ट्रेलिया होकर जाने में वहां उतरने की आज्ञा पहिले मंगानी होगी पर न्यूज़ीलैण्ड होकर जानेमें कोई विशेष दिक़्क़त नहीं होगी। और सबसे सस्ता मार्ग तो यह है कि British India Steam Navigation Company के उन जहाज़ों से जावें जो कि कुली जहाज़ कहलाते हैं। इन्हीं जहाज़ों में हम कुली लोग बहकाकर भेजे जाते हैं। इन जहाज़ों से जानेवालों को यह भी ज्ञात होजावेगा कि जहाज़ों पर हमारे भाइयों को कितने कष्ट दिये जाते हैं। परन्तु इन जहाज़ों का आना जाना ठीक २ निश्चित नहीं रहता।

स्वदेश की यात्रा।

है ऐसो कोउ अधम मनुज जीवित जगमांहीं
जाके मुख सों बचन कबहुं निकस्यो यह नाहीं
"जन्मभूमि अभिराम यही है मेरी प्यारी
वारी जापै तीन लोक की सम्पति सारी"?
सात समुन्दर पार विदेशन सों करि विचरन
भयो नाहिं घरचलन समयहरषित जाकोमन?

(जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी)

उपरोक्त कथन अक्षरशः सत्य है। शायद ही संसार में कोई ऐसा अधम मनुष्य निकले जिसका कि मन विदेशसे अपने घर को आते समय प्रसन्न न हुआ हो। २१ वर्ष फ़िजीमें रहकर मेरे हृदयमें अपनी मातृभूमि और माताके दर्शन करने के लिये उत्कट इच्छा उत्पन्न हुई। मैंने अपना यह विचार डाकृर मणिलाल जी से कहा। उन्होंने कहा अगर तुम वहां जाकर कुछ काम करो तो तुम्हारा जाना ठीक है" मैंने कहा न तो मुझ में इतनी बुद्धि है और न मैं कुछ अधिक पढ़ा लिखा ही हूं। मैं वहां अपने भाइयों की क्या सेवा कर सकूंगा? श्रीयुत मणिलालजी ने कहा "तुम्हारे लिये एक काम मैं बतलाता हूं कि तुम गांवों

में जाकर कुली प्रथा के विरुद्ध प्रचार करो और अपने ग्रामीण भाइयों को यहांके कष्टोंको बतलादो। मैंने भी यही कहा कि मैं आप की आज्ञा पालन करने का यथाशक्ति प्रयत्न करूंगा। तत्पश्चात् मैंने इमीग्रेशन विभागको इस बातको सूचना दी कि मैं भारतवर्ष को जाना चाहता हूं। वहांसे उत्तर आया कि २७ मार्च सन् १९१४ को सूवा से स्टीमर कलकत्ते को चल देगा। वहीं सूवा पहुंचना चाहिये। इसके बाद फ़िजी के हर ज़िले से प्रतिनिधि आकर एकत्रित हुए और सूवा में मुझे एक अभिनन्दन पत्र दिया। यद्यपि मैं इस आदर के योग्य कदापि नहीं था तथापि 'आज्ञागुरुणांह्यविचारणीया' अर्थात् गुरुओं की आज्ञा माननाही धर्म है यह सोचकर मैंने उनकी आज्ञा का पालन किया। इन लोगों ने भी मुझे यही आज्ञा दी कि तुम जाकर गांव के लोगों में हमारे दुःखों को जाकर सुनाओ और आरकाटियों के विरुद्ध यथाशक्ति आन्दोलन करो। जिस समय मैं उन लोगों से विदा हुआ उस समय मेरे हृदय में खेद और हर्ष दोनों के भाव उत्पन्न हो रहे थे। खेद इसलिये था कि मैं अपने भाइयों से जुदा होरहा था और हर्ष इसलिये कि मैं अपनी मातृभूमि को आरहा था।

इमीग्रेशन विभाग ने पहिले से विज्ञापन दे रक्खा था कि जो कोई हिन्दुस्तान जानेवाला हो वह सूवा में हमारे कार्यालय पर आवे। इस समाचार को पाकर कोई १३०० भारत-

वासी Immigration office में एकत्रित हुए। कितनेही तो इन में अपना घर खेत माल असबाब सब बेच कर स्वदेश को आने की तय्यारियां कर चुके थे इस आशा से उन्होंने अपनी वस्तुओं को आधे व तिहाई मूल्य पर देदिया था। परन्तु इनमें से कुल ८३३ आदमी लिये गये शेष सब धक्का मार कर निकाल दिये। एक भारतवासी जो फ़िजी में रहता था उसका पिता भारतवर्ष में मर गया। उसकी मा की चिट्ठी फ़िजी में पहुंची कि मैं भूखों मरी जाती हूं कौडी पास नहीं जैसे हो तैसे जल्दी चले आओ। वह बिचारा भागता हुआ आफ़िस में पहुंचा। जब वह भीड़ से निकल कर भीतर जाने लगा तो एक गोरे सिपाही ने उसे पकड़ लिया और उसे कोठरी में बन्द करदिया। दूसरे दिन जब उस पर यह अभियोग लगाया गया कि इमीग्रेशन के आफ़िस का मार्ग रोक रहा था। बस उस पर १० शिलिङ्ग जुर्माना हुआ और भारतवर्ष को आने की आज्ञा उसे नहीं मिली। उसके हृदय में अपनी विधवा मा के देखने की उत्कट इच्छा थी परन्तु उस सिपाही की धूर्तता के कारण वह भारतवर्ष आने से रोक दिया गया। पाठकगण! क्या आप उस मनुष्य के दुःख का अनुमान कर सकते हैं?

तदनन्तर हम लोगों को सूवा डिपो में जाना पड़ा। वहां पर नित्यप्रति हम लोगों की हाज़िरी होती थी। वहां भी हम लोगों के साथ पशुओं के समान वर्ताव किया जाता था। एक

बिचारे भारतवासी से कहीं यह अपराध बन पड़ा कि उसने नीबू के पेड़ से एक नीबू तोड़लिया। सो भी किसलिये? इसलिये कि उसका छोटा सा बच्चा नीबू के लिये बहुत देर से रो रहा था। फिर क्या था, गोरे साहब ने हाथ पकड़ कर उसे घसीट डाला, नीबू उससे छीनकर फेंक दिया और उसको जो टिकट भारतवर्ष जाने के लिये मिला था वह छीन लिया और उसे वहां से निकाल दिया। उसे फ़िजी में ही रहना पड़ा। रेल पर पहुंचने पर जब रेल छूट जाती है और बैठने नहीं पाते तो हम लोगों को बड़ा खेद होता है, यद्यपि हमें इस बात की आशा रहती है कि चार पांच घण्टे बाद दूसरी ट्रेन मिल जावेगी, तो भला उस मनुष्य को कितना रंज न हुआ होगा जिसे कि एक नीबू तोड़ने के अपराध में फ़िजी में वर्ष भर और रहना पड़ेगा और कष्ट भोगने पड़ेंगे।

जहाज़ चलने के एक दिन पहिले इमीग्रेशन आफ़िस के एक क्लर्क ने हम लोगों से पूछा 'कितने रुपये घर लिये जा रहे हो? क्योंकि यह बात वहां पर लिखी जाती है। कितने ही हमारे मूर्ख भाइयों ने लिखा दिया कि हम २००० रु० या ४००० रु० लिये जाते हैं। पीछे से कलकत्ते पहुंचने पर मुझे ज्ञात हुआ कि इनके पास एक कौड़ी भी नहीं थी, कलकत्तेसे घरातक के लिये किराया भी तो था ही नहीं। ये लोग यह नहीं समझते कि झूठ लिखा देने से बहुत हानि होती है। जब कभी कोई

फ़िजी प्रवासी भारतवासियों के दुःख वर्णन करता है तो इमीग्रेशन आफ़िसवाले यह प्रमाण पेश करते हैं कि देखो इतने लाख रुपये प्रतिवर्ष कुली लोग कमाकर फ़िजी से भारतवर्ष लेजाते हैं। इसके अतिरिक्त इमीग्रेशन आफ़िस के क्लर्क लोग तो शून्य का कुछ मानही नहीं समझते। किसी कुली ने कहा हम १५) रु० घर लिये जा रहे हैं पर क्लर्क साहब ने एक शून्य और बढ़ाकर १५०) लिख दिये। इसके अतिरिक्त कोई छल्ला अंगूठी इत्यादि पहिने हो तो उसका भी मूल्य दस बीस गुना लिख देते हैं। उदाहरणार्थ कोई चांदी का छल्ला पहिने हुए है। क्लर्क साहब पूंछते हैं 'यह छल्ला कितने का है?' उसने कहा हुज़ूर! यह ८ आने का है!! क्लर्क साहब कहते हैं यह छल्ला ८ आने का है!!! यह कम से कम ८) रु० का है। हम इसका दाम रजिस्टर में ८) रु० लिखता है। यह कहकर उस छल्ले के दाम ८ रु० लिख दिये। जब इस प्रकार से लिखे गये रुपयों का जोड़ लाखों पर पहुंचे तो इसमें आश्चर्य ही क्या है?

जहाज़ में बैठने में भी इमीग्रेशन विभाग के हेड क्लर्क साहब बड़ा कष्ट देते हैं। यदि किसी आदमी के पास अधिक सामान हो तो उसे बड़ी तकलीफ़ सहनी पड़ती है। क्लर्क साहब एक बार जितना सामान एक आदमी ला सकता है उतनाही लाने देते हैं। दूसरी बार फिर नहीं जाने देते चाहे

उसका सामान डिपो में वहीं पड़ा रह जावे।

किम्बहुना हम लोग भेड़ बकरियों की तरह जहाज़ में भर दिये गये। मार्ग की कठिनाइयों के वर्णन करने की आवश्यकता नहीं। एक बार जब कि हमारे भाइयों को जहाज़ में खाना बँट रहा था और एक गोरा डाक्टर हाथ में बेत लिये दो एक भारतवासी को मारता जाता था, मैंने फ़ोटो से उस की तस्वीर खींची। गोरे डाक्टर को यह बात ज्ञात होगई। वह मेरे पास आया और मुझ से कहा 'ज़रा इस फ़ोटो को मुझे दीजिये। देखूँ आप कैसा खीचते हैं। मैंने धोखे में आकर उसे प्लेट सहित केमरा देदिया, उसने झट से मेरे केमरा और प्लेट इत्यादि को समुद्र में फेंक दिया, मैं देखता ही रह गया।

जहाज़ में हम ८३३ भारतवासी फ़िजी से लौट कर आये थे। इनमें से लगभग ५०० के पास तो कलकत्ते से घर तक जाने के लिये किराया भी नहीं था। जो लोग कहते हैं कि टापुओं में जाकर भारतवासी धन बटोर लाते हैं उन्हें आंखे खोलकर उपरोक्त बात पर ध्यान देना चाहिये। मुझे फ़िजी से चलते समय एक विश्वस्त सूत्र से ज्ञात हुआ था कि मेरी तलाशी ली जावेगी। अतएव मैंने अपने सन्दूक पर से अपने नाम को तारकोल से मिटवा दिया और अपने एक मित्र का नाम लिखवा दिया। इस सन्दूक में बहुत से कागज़ पत्र ऐसे थे जिनमें कि फ़िजी प्रवासी भारत-

वासियों के दुःखों और कष्टों का वर्णन था और कितनेही मजिस्ट्रेटों के फैसलों (Judgments) की प्रतिलिपि थीं। श्रीमान् गांधी जी श्रीयुत मणिलाल जी इत्यादि से जो पत्र-व्यवहार हुआ था उसकी नक़लें थीं। यद्यपि इन वस्तुओंमें कोई वस्तु हानिकारक नहीं थी पर मुझे ख़्याल था कि फ़िजी के गोरे मेरा पीछा जहाज़ में भी नहीं छोड़ेंगे। आख़िरकार तलाशी हुई। असली सन्दूक तो, जिसमें कि काग़ज़ पत्र थे, मेरे एक मित्र के पास था, पर एक दूसरे ट्रंक की तलाशी ली गई।

जहाज़ में हम लोगों ने चन्दा इकट्ठा किया और १८ आदमियों को घर तक जाने के लिये दाम दिये। मैंने विचार किया कि कलकत्ते चलकर हम लोग मिल कर किसी बैरिस्टर के पास चलेंगे और अपने दुःखों का वर्णन लिखा कर एक प्रार्थना-पत्र सरकार की सेवा में भेजेंगे। इस बात के लिये मैंने ६० आदमियों को तयार भी किया था और उनकी आवश्यकताओं की पूर्त्ति के लिये थोड़ा बहुत चन्दा भी इकट्ठा कर दिया था। पहिली अप्रैल सन् १९१४ को हम लोग कलकत्ते आ पहुंचे। अपनी मातृभूमि के दर्शन कर हम लोगों का हृदय गदगद होगया। खेदकी बात है कि जिन लोगों को मैं ने बैरिस्टर के पास चलने के लिये तयार किया था, वे जहाज़ से उतरते ही इधर उधर चले गये और मैं अकेला वहां रह

गया। हिरनगौ में अपने घर पहुंच कर अपनी मां के चरण छूने से मुझे जो प्रसन्नता हुई वह अवर्णनीय है।

उपसंहार

इस अन्तिम अध्याय में मुझे कुछ कुली प्रथा के विषय में कहना है।

जो कोई उपनिवेशों में जाकर गिरमिट में काम करनेवाले भारतवासियों को अपनी आंखों से देखेगा तो उसे यह अवश्य ज्ञात हो जावेगा कि राज कर्म्मचारियों की लिखी हुई विवरणी और कमीशनों की लिखी हुई रिपोर्ट प्रायः प्रवासी भारतवासियों की वास्तविक स्थिति को प्रगट नहीं करतीं। सूक्ष्म दृष्टि से देखनेवाले को यह फ़ौरन ज्ञात हो सकता है कि कुली प्रथा दासत्व प्रथा का एक नूतन संस्करण है। Sir Charles Bruce ने The Broad Stone of Empire नामक पुस्तक में लिखा है कि "जब गोरे लोग उष्ण देशों में शारीरिक परिश्रम न कर सके तो फिर कृष्णवर्ण मज़दूरों की आवश्यकता हुई। दास्तव प्रथा के बन्द होने के पहिले कितने ही उपनिवेशों में हबशी लोग ही मज़दूरों का काम करते थे परन्तु जब दास्तव प्रथा बन्द हुई तो स्वतन्त्र हबशी लोग इस कार्य को अत्यन्त नीच और दासोचित समझने लगे। कुछ उपनिवेशों में वहां के आदिम निवासी इतने असभ्य थे कि वे

नियमित रूप से खेती का काम न कर सके। यही बातें कुली प्रथा के जन्म का कारण हुईं और इसी प्रथा से कुली लोग मौरीशस, नेटाल, ट्रिनीडाड, जमैका, ब्रटिशगायना इत्यादि को भेजे जाने लगे।"

सन् १८७५ ई० में लार्ड सेलिसबरी ने इस प्रथा के विषय में लिखा था कि अंग्रेज़ी राज्य ने भारतवर्ष में मार काट बहुत कम करा दी है इस कारण आबादी बहुत बढ़ गई है, इसलिये लोगों को खाने पीने का आराम नहीं है, अतएव भारतवासियों का उन देशों में जाना अच्छा है जहां कि उन्हें अपने देश से अधिक मज़दूरी मिले। लार्ड सेलिसबरी ने अन्त में लिखा था।

"Above all things we must confidently expect, as an indispensable condition of the proposed arrangements, that the colonial laws and their administration will be such that Indian settlers, who have completed the terms of service to which they agreed, as the return for the expense of bringing then to the colonies, will be free men in all respects, whit privilages no whit inferior to those of any other clan of her Majesty's subjects resident in the colonies.

(देखो साप्ताहिक भारतमित्र १ जून सन् १९१४)

अर्थात् सब बातों की बात तो यह है कि प्रस्तावित प्रबन्ध की इस अटूट शर्त पर हमें विश्वास पूर्वक आशा करनी

चाहिये कि उपनिवेशों के कानन और उनका प्रयोग ऐसा होगा कि जिन प्रवासी भारतवासियों के शर्तनामे की म्याद पूरी हो जावेगी, वे उपनिवेशों में अपने लाये जाने के कष्ट के परिवर्त्तन में सब प्रकार से स्वतन्त्र होंगे और उपनिवेशों में रहने वाली महारानी की अन्यदेशीय प्रजा के अधिकारों से उनके अधिकार किसी प्रकार कम न होंगे।

यह कहना बाहुल्य-मात्र है कि लार्ड साहब ने जो आशा दिलाई थी वह बिलकुल निर्मूल निकली। उपनिवेशों में जो दुःख हमारे भाइयों को दिये जाते हैं उन का अंत नहीं है। इससे भारत सरकार को भी कष्ट होता है क्योंकि वहां के भारतवासियों पर जब अन्याचार होता है तब यहां पर आंदोलन होता है राजकीय उपनिवेशों में गोरे प्लैण्टर हम लोगों के साथ गधे और कुत्ते जैसा व्यवहार करते हैं। यदि यह व्यवहार किसी अन्य राष्ट्र के लोगों के साथ किया जाता तो यह कुलीप्रथा कबकी बंद होगई होती। फ़िजी द्वीप में कुछ जापानी शर्तबंदी में लाये गये थे। यद्यपि गोरे लोगों ने हम भारतवासी कुलियों से कहीं अधिक सुविधायें जापानियों के लिये रक्खी थीं पर तब भी लग भग तिहाई जापानी कड़ा काम करते २ मर गये तब तो जापान सरकार ने अपने जापानियों को वहां से लौटा लिया। सुलेमान द्वीप के निवासी भी इसी तरह गिरमिट में काम करने के लिये फ़िजी द्वीप में लाये

गये थे पर वे भी इन दुःखों को न सह सके और वे भी लौटा लिये जा रहे हैं। यह भारतवासी ही हैं जो चने चबा कर १२ घंटे काम कर सकते हैं। मैं अपने २१ वर्ष के अनुभव से कह सकता हूं जितना काम १ भारतवासी मज़दूर एक दिन में कर सकता है उतना काम ३ अंग्रेज़, जपानी या चीनी मज़दूर एक दिन में कठिनता से कर सकते हैं, यदि दोनों की असुविधायें समान हों और दोनों को एकसा खाना दिया जावे। फ़िजीवालों ने जब चीन सरकार से मज़दूरों के लिये प्रार्थना की थी तो चीन सरकार ने साफ़ मना कर दिया। क्या हमारी सरकार ने यह दृढ़ निश्चय कर लिया है कि कुली प्रथा बंद न की जावे? क्या सरकार का यह कर्त्तव्य नहीं है कि अपनी प्रजा की रक्षा करें? जापानी, सुलेमानी और पालीनीशियन लोगों ने फ़िजी में कुलियों का जाना बंद करा दिया तो फिर हमारी सरकार ही इस बात की क्यों आज्ञा देती है कि जितने कुली चाहो इस देश से भर कर ले जाओ? जिस देश के स्वतंत्रता-प्रिय लोगों ने दासत्व प्रथा को उठाने के लिये तन मन धन से प्रयत्न किया, हा! उसी देश के लोग दासत्व प्रथा की लड़की कुली प्रथा के पृष्ठपोषक बने हैं, कितने खेद की बात है? कामन्स की सभामें जब श्रीमान् Donglas Hall ने इस विषय में पूछा था तो श्रीमान् Montagu ने जो उपसचिव हैं कहा था:—

"I may add that the recent Inter Departmental Committe under Lord Sanderson has recommended that the system be allowed to continue subject to certain recommendation in regard to particular colonies and thev are under discussion."

अर्थात् मैं कह सकता हूं कि पिछली अन्तर्विभागीय कमैटी ने, जिसके कि प्रधान लार्ड सैंडरसन थे, यह सिफ़ारिश की है कि कुली प्रथा जारी रक्खी जावे और ख़ास २ उपनिवेशों में कुछ सुधार किये जावें और इन सुधारों के विषय में अभी बातचीत हो रही है'।

तब तो हम जानते जब अंग्रेज़ लोग कुली प्रथा में शिलिंग रोज पर भेजे जाते और खाने के लिये साढ़े चार सेर आटा और सवा सेर कच्ची दाल सात दिन को दी जाती, पानी पीने को एक टीन का लोटा और खाना रखने के लिये १ टीन की थाली सोने के लिये ३ आदमी को कुली लैन की १ कोठरी दी जाती और ज़मीन पर मूसे की खोदी हुई मिट्टी पर बिना खटिया गद्दा तकिये के सोना पड़ता और तीन बजे रात में उठ कर काम पर जाने की तैयारी करनीं होती काम पर दिन में एक दो वार ओवरसियर की किक् (लात ठोकर) लगती तो फिर लार्ड सैण्डरसन और श्रीमान् Montagu क्या यही कहते कि कुली प्रथा जारी रक्खी जावे।

जब महाशय गोखले ने Indenture system कुली प्रथा

के विरुद्ध एक प्रस्ताव को कौंसिल में पेश किया था तो सरकारी सदस्य क्लार्क साहबने इस बात को स्वीकृत किया था। कि शर्त बन्दी के असली नियम कुलियों को नहीं समझाये जाते। सन् १९१२ के सरकारी गज़ट के ३१६ वें पृष्ठ पर क्लार्क साहब लिखते हैं।

It is perfectly true that terms of the contract do not explain to the coolie the fact that if he does not carry out his contractor for other offences (like refusing to go to hospital when ill, breach of discipline etc.) he is to incur imprisonment or fine.

अर्थात् यह बात बिलकुल ठीक है कि शर्तबन्दी में जो रक्खे जाते हैं उनमें से किसी नियम से कुली को यह बात ज्ञात नहीं होती कि अगर वह शर्त के अनुसार काम न कर सकेगा अथवा कोई दूसरा अपराध करेगा (जैसे बीमार होने पर अस्पताल को न जाना, आज्ञा भंग करना इत्यादि) तो उस पर जुर्माना होगा या उसे क़ैद होगी।

खेद तो हमें इस बात का है कि सब बातों को जानते हुए भी क्लार्क साहबने कुली प्रथाका समर्थन किया था। सम्भवतः क्लार्क साहब यह चाहते हैं कि उपनिवेशों के प्लैंटरों के स्वार्थ के लिये भारतवासियों के अधिकार स्वतन्त्रता और जीवन तक को नष्ट कर दिया जावे !!

प्रवासी भारतवासी लोगों की संख्या—

राजकीय उपनिवेश

नाम उपनिवेश	भारतियों की संख्या	उपनिवेशों की कुल जनसंख्या
ब्रिटिश गायना	१२६१८१	२६६०४४
फेडेरेटेड मलाया स्टेट्स	१७२४६५	१०३६९९९
फ़िजी	४८६१४	१४८८७१
गिलवर्ट द्वीप	३०१	३११२१
हांगकांग	३०४६	४६७७७७
जमैका	१७३८०	८३१३८२
मोरशस	२५७६९७	३६८७९१
न्यूज़ीलैगड	४६३	१०००००
दक्षणी रोडैसिया	२६१२	७७००००
स्टेट सैटिलमैगट्स	८२०५५	७१४९६९
ट्रिनिडाड और टोवेजो	५०५८५	३३३५५२
उगांडा	३११०	२८९३४६४
जंज़ीबार	१००००	१९८९१४

(देखो माडर्न रिव्यू मार्च १९१४)

यह तो हुई राजकीय उपनिवेशों की बात, इन के अतिरिक्त और भी कितने ही उपनिवेशों में बहुत से भारतवासी बस गये हैं। उदाहरणार्थः—

नाम उपनिवेश	भारतीय लोगों की जन संख्या
आस्ट्रेलिया	६६४४
कनेडा	४५००
दक्षिण अफ्रिका	१५८०८२
नेटाल १३३०३४, ट्रान्सवाल १००४८, केप कालोनी १५०००	
विंडवार्ड और सेंटलूशिया	२५२३
ग्रेनेडा	२२६२
सीलोन (सिंहल द्वीप)	९०००००
बृटिश पूर्व अफ्रीका	३०७१
मोमबासा	५३००
सचेलीज़	१५०
बहावात	४
सिरालियोन	२४
बरवडीज़	१
उत्तर नाइजीरिया	३०
बृटिश हांडुराज़	२००

अंग्रेज़ शासित उपनिवेशों में १८७२५७८ और डच उपनिवेश सुरिनाम में २७३५८ भारतवासी हैं। उपनिवेशों में में कुल भारतवासी १८९९९३८ हैं।

दुष्ट आरकाटी लोग अपने प्रयत्न में कैसी सफलता

प्राप्त कर रहे हैं, यह दिखलाने के लिये निम्न लिखित अङ्क पर्याप्त होंगे।

१८४२ से १८७० तक आरकाटियों ने बहका कर कितने भारतवासी दूसरे द्वीपों में भेजे थे—

मौरीशस	३५१४०१
बृटिश गायना	७६६६१
ट्रिनीडाड	४२५१६
जमैका	१५१६६
वैस्ट इण्डियन द्वीप समूह	७०२१
नैटाल	६४४८
फ्रैञ्च उपनिवेश	३१३४६

(देखो माडर्न रिव्यू फर्वरी १६१२)

किन किन उपनिवेशों में कुली जाना कब प्रारम्भ हुआ:—

मौरीशस और रियूनियम—	१६ वीं शताब्दी के प्रारम्भ में
ब्रिटिश गायना	सन् १८४४
ट्रिनीडाड	सन् १८४४
ग्रेनेडा	सन् १८५६
सेंटलूशिया	सन् १८५८
नेटाल	सन् १८६०
सैंट क्रायज (डेनमार्क)	सन् १८६३

सुरिनाम (डच) सन् १८७२
फ़िजी सन् १८८५

जहां तक हमें ज्ञात है अब केवल सुरिनाम ही एक ऐसा विदेशी उपनिवेश है जहां ब्रिटिश उपनिवेशों की भांति कुली भेजे जाते हैं। वैसे तो सभी उपनिवेशों में हम लोगों के साथ बहुत बुरा बर्ताव किया जाता है पर आश्चर्य और दुःख तो हमें इस बात का है कि ब्रिटिश उपनिवेशों में विदेशी उपनिवेशों की अपेक्षा औरभी बुरा बर्ताव हम लोगोंके साथ किया जाता है। श्रीमान् W. W. Pearson M.A.B.Sc. ने जोकि दक्षिण अफ़्रिका गये थे एक लेख जुलाई १९१४के माडर्न रिव्यूमें पुर्तगालके पूर्वीय अफ़्रिका के विषय में लिखा है। पियरसन साहबके कथन का सारांश यह है कि जो आदमी ब्रिटिश साम्राज्य में पैदा होने का घमंड रखता हो और जो यह विचार करता रहा हो कि ब्रिटिश के झंडे के नीचे सब लोगों के साथ न्याय और समानता का बर्ताव किया जाता है' उसे यह देखकर बड़ी लज्जा आवेगी कि जो बर्ताव पुर्त्तगालवालों के उपनिवेशों में भारत वासियों के साथ किया जाता है वह उससे कहीं बेहतर है जो बृटिश उपनिवेशों में उनके साथ किया जाता है।

रैवरैण्ड एण्ड्रूज़ की कुली प्रथा के विषय में सम्मति

जनवरी सन् १९१४ के माडर्न रिव्यू में श्रीमान् रैवरैण्ड सी. एफ़. एण्ड्रूज़ ने कुली प्रथा के विषय में कितनी ही सार

गर्भित बातें लिखी हैं। उनके उक्त लेख का अनुवाद यहां देना अप्रासङ्गिक न होगा। श्रीमान् एण्डूज़ साहब लिखते हैं "लेकिन अब मैं देखता हूं कि कुली प्रथा का प्रश्न एक जुदा ही प्रश्न है और इस प्रश्न के हल करने से स्वतन्त्र भारतवासियों को बहुत लाभ होगा। मेरा विश्वास है कि अब भारतवर्ष में हमारा सब से पहिला कर्त्तव्य है कि हम सब मिलकर इस नियम के लिये आन्दोलन करें कि एक भी भारतवासी कभी भी किसी भी मतलब के लिये शर्तबन्दी में कुली बना कर न भेजा जावे। इस नियम को हम Abolition of Indenture system 'कुली प्रथा का उच्छेद' इस नाम से पुकारते हैं। इस शर्तबन्दी की प्रथा को बन्द करने के लिये हमें सर्वोच्च कारण यह बतलाना चाहिये कि एक सभ्य देश के लिये यह अयोग्य है कि उसके नागरिक अपने को एक प्रकार की वास्तविक गुलामी में बेच डालें और चूंकि भारतवर्ष अब संसार के उन्नतिशील राष्ट्रों में स्थान प्राप्त कर रहा है, इसलिये भारतवासी इस बात की दृढ़ प्रतिज्ञा करते हैं कि हम इस कुली प्रथा को जड़ मूल से नष्ट कर देंगे, क्योंकि यह प्रथा हमारी सुकीर्त्ति को नष्ट कर रही है। यदि कुली प्रथा के पक्ष में कोई यह तर्क पेश करे कि शर्तबन्दी में काम करनेवाले भारतवासी कुलियों की आर्थिक स्थिति उन की उस समय की स्थिति से अच्छी होती है जब कि वे

स्वतंत्र थे, तो इसका उत्तर यह है कि यही तर्क तो दासत्व प्रथा के पक्षपाती पेश करते थे, और इसी तर्क ने दासत्व प्रथा के बन्द होने में ५० वर्ष की और देर लगाई थी। इस तर्क का खंडन विस्तार पूर्वक करने की आवश्यकता नहीं क्योंकि स्वयं इतिहास ने ही इसका खंडन कर दिया है। यदि कोई यह तर्क पेश करे कि कुली प्रथा में कुलियों की रक्षा के लिये बहुत से नियम बने हुये हैं और कुली प्रथा में वैसे अत्याचार नहीं होते जैसे कि प्राचीन दासत्व प्रथा में होते थे, तो मैं उससे बहस नहीं करूंगा। मैं केवल उसे यह दिखला दूंगा कि किसी पिछले साल में जहां भारत वर्ष में १० लाख पीछे ३७ आदमियों ने आत्म हत्या की वहां नेटाल में शर्त बंदी में काम करनेवाले कुलियों में १० लाख पीछे ६६२ आदमियों ने आत्म हत्या की। यहां पर यह बात ध्यान देने योग्य है कि इस साल में कोई विशेष कारण आत्मघात के नहीं हुये आप किसी भी वर्ष को लेलें सब में लग भग यही सम्बन्ध रहेगा। जिस प्रथा से इस प्रकार के फल निकलें वह अपने आप अत्यन्त निन्दनीय है, चाहे उस में रक्षा के कितने ही नियम क्यों न बनाये जावें। यदि दूसरी हालतों में इस प्रथा से उत्पन्न हुए दुःखों के फल दृष्टिगोचर न हों' तब भी यह प्रथा इतनी भयानक है और इस में अन्याय और अत्याचार की इतनी आशङ्कायें हैं, कि सब से अधिक बुद्धिमानी

की बात यही है कि इस प्रथा को बिलकुल बंद कर दिया जावे। यदि हम यह बात तर्क के लिये मानभी लें कि प्लैण्टर लोग दयाशील होंगे और हर तरह के कुलियों के रक्षा के नियम काम में लाये जावेंगे, तब भी हमें यह बात कहनी पड़ेगी कि यह प्रथा एक उन्नतिशील राष्ट्र के लिये सर्वथा अनुचित और अयोग्य है। कोई भी इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकता कि इङ्गलेड और अमरीका में यह प्रथा इसी तरह जारी रहती जिस तरह कि यह भारतवर्ष में प्रचलित है। स्वयं हम लोग भी भारतवर्ष में इस प्रथा की अमानुषिकता को जान गये हैं और इस प्रथा से हमारा जो मान भङ्ग होता है उसे भी हम अपने हृदय में पहिचान गये हैं। यदि वर्तमान समय के सर्वोत्तम वीर और सर्वोत्कृष्ट महात्मा श्रीमान् गान्धी के प्रयत्न का केवल यही फल हो कि उपरोक्त भाव हमारे हृदय में उत्पन्न हो जावें और हम कुली प्रथा के विरुद्ध कार्य में प्रवृत्त हों तो भी गान्धी जी का प्रयत्न निष्फल और व्यर्थ नहीं कहा जा सकता। यह हम मानते हैं कि हमें दूसरे दोषों को भी दूर करना होगा। हम लोग अपनी अन्त्यज जातियों के साथ जो अमानुषिक बर्ताव करते हैं उसे दूर करना होगा। हम इन बातों का भी ख्याल रक्खेंगे। परन्तु कुली प्रथा का प्रश्न एक आसन्न प्रश्न है।

यदि हम इस प्रश्न का सामना ठीक तरह से और न्याय

के साथ करेंगे तो सम्पूर्ण सभ्य संसार की दृष्टि में हम आदरणीय होंगे। क्या हम सब मिल कर इस बात का प्रतिपादन करेंगे कि कुली प्रथा बन्द करदी जावे ? यदि हम इस बात के लिये तैयार हैं तो हम सब को एक साथ मिल कर काम करना चाहिये। क्या हिन्दू क्या मुसलमान और क्या ईसाई सबको एक स्वर से यही कहना चाहिये कि कुली प्रथा बन्द कर दी जावे फिर हमारी इस स्पष्ट और न्याय्य प्रार्थना को कोई नहीं रोक सकता। हमें इस बात के लिये व्यक्तिगत स्वार्थ को तिलांजुलि देनी होगी और संसार को यह दिखाना होगा कि हम सिर्फ़ बातें ही नहीं करते दृढ़ता से काम भी करते हैं। इसमें हमें अन्य स्वार्थी लोगों के साथ भी न्याय पूर्वक और यथोचित रीति से बर्ताव करना होगा। हमारा विरोध और प्रतीकार भी किया जावेगा। भारत वासियों के अन्तःकरण इस असह्य अन्याय से विचलित होगये हैं। परन्तु हम यह नहीं जानते कि हम क्या करें। चारों ओर से आदमी चिल्ला रहे हैं। हम क्या करें ? हम क्या करें ? आओ हम सब मिल कर कुली प्रथा को बन्द करें यदि हम यह काम करेंगे तो हमारा यही काम उपनिवेशों के स्वतंत्र भारत-वासियों के आन्दोलन में बहुत कुछ सहायता देगा।

रैवरैण्ड एण्ड्रुज़ की हम शतमुख से प्रशंसा करते हैं और उनकी इस कृपा के लिये प्रत्येक भारतवासी उनका कृतज्ञ

होगा। दासत्व प्रथा और कुली प्रथा में केवल इतना ही फ़र्क़ है कि पहली प्रायः जीवन भरके लिये होती थी और दूसरी निश्चित समय तक के लिये।

हमारा क्या कर्तव्य है—प्रत्येक भारतवासी का यह कर्त्तव्य है कि इस प्रथा के विरुद्ध आन्दोलन में सहायता करे। यह कोई राजविद्रोह का काम नहीं है, आरकाटी लोग सरकारी नियमों का भी उल्लंघन करके लोगों को फुसलाते हैं और हम लोग आरकाटियों के विरुद्ध आन्दोलन करते हैं अतएव हमारी मत्यनुसार यह कार्य्य सर्वथा राजभक्ति पूर्ण है। कई जगह ऐसा हुआ कि कुली प्रथा के विरुद्ध व्याख्यान देने का प्रबन्ध किया गया, पर आरकाटियों के बहकाने से लोगों ने इस कार्य को राजविद्रोहपूर्ण समझ कर. व्याख्यानके लिये अपना स्थान ही नहीं दिया। कितने खेद की बात है कि रण्डी के नाच के लिये हम अपना स्थान राज़ी से दे दें पर कुली प्रथा के विरुद्ध लैक्चर के लिये प्रार्थना करने पर भी न दें। समाचारपत्रों का यह प्रथम कर्त्तव्य है कि इस कुली प्रथा के विरुद्ध सैकड़ों लेख छापें। हिन्दी पत्रोंमें भारत मित्र और अंग्रेज़ी पत्रों में माडर्नरिव्यू को छोड़कर ऐसे बहुत कम समाचारपत्र हमारे देखने में आये हैं जिन्होंनेकि इस ओर विशेष ध्यान दिया हो। हमें उपरोक्तपत्रों के सम्पादकों की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करनी चाहिये और अन्य समाचारपत्रों

को उनके इस प्रशंसनीय कार्य का अनुकरण करना चाहिये। ज़िमींदार लोगों का यह कर्त्तव्य है कि अपने अपने गांवों में लोगों को आरकाटियों के फन्दे में न फंसने के लिये उपदेश करें। परमेश्वर ने जिन लोगों को धनवान् बनाया है उन्हें उचित है कि इस कार्य में आर्थिक सहायता दें और जगह २ पर कुली प्रथा निवारिणी सभा स्थापित करें। जिन लोगों में वक्तृत्व शक्ति है उन से यह प्रार्थना करनी चाहिये कि कभी २ दो चार शब्द इस कुली प्रथा के विरुद्ध भी कह दिया करें। जो लोग कौंसिल के मेम्बर हैं उनका कर्त्तव्य है कि इस प्रथा के विरुद्ध प्रस्ताव व्यवस्थापक सभा में पेश करें। यदि इन लोगों से यह कार्य भी नहीं हुआ तो इनको प्रजा का प्रतिनिधि समझना भारी भूल है। हम लोगों को उचित है कि स्वयंसेवक बनें और तीर्थों में यात्रियों को इन धूर्तों से बचावें।

सरकार का क्या कर्तव्य है:

सरकार को उचित है कि बिना विलम्ब इस प्रथा को बंद करदे। इस प्रथाके प्रचलित करने के पाप का प्रायश्चित्त यही है कि प्रथा फ़ौरन बंद करदी जावे और ऐसी स्कीम बनाई जावे और ऐसे कार्य खोले जावें जिन से कि अपने देश भारतवर्ष ही में मजदूरों की मांग बढ़े। मध्यप्रदेश में बहुत सी ज़मीन खाली पड़ी है, और देशी रियासतों में तो भूमि की

कमीहीं क्या है। दूसरे प्रान्तोंमें भी कितनेहीं ज़िले ऐसे हैं जिनमें बहुत सी जगह खाली है। उदाहरणार्थ युक्त प्रदेश में बस्ती ज़िला मद्रास में गंजाम ज़िला इत्यादि। सरकार का कर्त्तव्य है कि इन स्थानों को बसाने का प्रयत्न करे।

कांग्रेस का कर्त्तव्य है कि विशेष एजेंसी बनावे जो कि प्रवासी भारतवासियों के विषय में ज्ञातव्य बातों की हम लोगों को सूचना दिया करे। जो जो अत्याचार और अन्याय हमारे भाइयों पर दूसरे देशों में किये जाते हैं उन में से प्रत्येक के लिये समाचार पत्रों में खूब आन्दोलन करना चाहिये।

गवर्नमेण्ट ने जो Commerce and Industry विभाग खोल रक्खा है और जिसमें कि लाखों रूपये व्यय होते हैं, सब से पहले उसका फ़र्ज है कि सरकार से ऐसे काम खुलवावे जिनमें भारतवासी मज़दूर अपने देश में ही नौकरी पावें।

मेरा विचार है कि जहां जहां पर डिपो खुली हुई हैं वहां वहां स्वयं जाकर अपनी तुच्छ बुद्धि अनुसार टापुओं के दुःखों को सुनाऊं। पर इस कार्य में मुझे सर्वसाधारण की सहायता की आवश्यकता है। पाठक कृपया मुझे लिखें कि किन किन नगरों में डिपो खुली हुई हैं। मैं उन स्थानों के नाम अपने भ्रमण के प्रोग्राम में अवश्य लिख लूंगा और यथावकाश वहां जाने का प्रयत्न करूंगा। स्थानाभाव से इस विषय में यहां अधिक नहीं लिख सकता।

हमें विश्वास करना चाहिये कि कुली प्रथा बंद होगी और अवश्य बंद होगी। जब हमारे देश के नेता महाशय गोखले उस के विरुद्ध आन्दोलन कर रहे थे तो फिर हमें निराश कभी न होना चाहिये। राजनैतिक महर्षि गोखले ने इस प्रथा के विरुद्ध प्रस्ताव करते हुये कौंसिल में कहा था:—

'This motion, the council may rest assured will be brought forward again and again, till we carry it to a successful issue It affects our national self-respect and therefore the sooner the Government recognises the necessity of accepting it the better it will be for all parties."

(४ थी मार्च १९१२)

अर्थात् कौंसिल इस बात पर विश्वास रक्खे कि यह प्रस्ताव बराबर कौंसिल में बार बार पेश किया जावेगा जब तक कि हम लोग इस में सफल न होवें। इस प्रथा का बुरा प्रभाव हमारे जातीय आत्मसम्मान पर पड़ता है। जितनी जल्दी गवर्नमैंएट हमारे इस प्रस्ताव को स्वीकृत करेगी उतनी ही ज्यादा सब ओर वालों की भलाई होगी।

सरकार से इस विषय में विशेष प्रार्थना करने की आवश्यकता है। जब तक सर्कार प्रजा के हित को अपना हित न समझेगी तब तक प्रजा का असन्तोष नष्ट नहीं हो सकता। प्रजा को संतोष देना ही सरकार का सब से पहिला कर्त्तव्य है 'राजा प्रकृति रञ्जनात्'।

पाठकगण ! मैंने अपनी तुच्छ बुद्धि अनुसार आप की सेवा में यह निवेदन किया है। सम्भवतः कुछ लोग इसे पढ़ कर कहेंगे 'चलो जी इस कुली की बात को क्या सुनते हो। यदि कोई सुशिक्षित आदमी कहता तो हम सुनतेऔर विश्वास भी करते।' मैं ऐसे सहृदय लोगों से विनय पूर्वक क्षमा मांगता हूं और अन्त में यही कहता हूं"

हे प्रिय देशबन्धु ! आओ हम सब मिलकर कुली प्रथा के विरुद्ध आन्दोलन करें। यदि हम लोगों ने तन मन धन से प्रयत्न किया तो परमेश्वर हमारी सहायता अवश्य करेगा, क्योंकिः—

'दैवं पुरुषकारेण साध्य सिद्धि निबंधनं'

॥ इति ॥

फिजीद्वीप में मेरे २१ वर्ष

मूल्य ।≈)

हिन्दी भाषा में अपने ढङ्ग की अद्वितीय पुस्तक

इस पुस्तक का प्रथम संस्करण हाथों हाथ बिक गया। इसका अनुवाद उर्दू मराठी तथा अंग्रेज़ी में हो गया है और गुजराती में होने वाला है। इस पुस्तक ने हिन्दी साहित्य में असाधारण सफलता प्राप्त की है। हम अपनी ओर से अधिक न कहके कुछ समालोचनाओं और सम्मतियों का सार दिये देते हैं।

प्रसिद्ध पुरुषों की सम्मति

Mr. C. F. Andrews M. A., "I can assure you the book you have sent will be of very great service to the cause we all have so much at heart the abolition of this indenture slavery.......I have got a translation made for me of your excellent book. It is very nearly completed. I shall use it freely."

भारतहितैषी मिस्टर सी०एफ़० एण्ड्रूज़ एम०ए० लिखते हैं "मैं आपको विश्वास दिला सकता हूं कि जो पुस्तक आपने

भेजी है वह शर्तबंधी गुलामी (कुलीप्रथा) के उठा देनें में, जैसा कि हम सब लोग हृदय से चाहते हैं, बड़ी भारी सहायता देगी। मैंने आपकी सर्वोत्तम पुस्तक का अनुवाद करवा लिया है। यह अनुवाद लगभग समाप्त हो चुका है। मैं उसका ख़ूब प्रयोग करूंगा"

Sir Henry cotton K C.S.I:—"I am much obliged to you for your letter and also for your little book on Fiji I no longer read Hindi writing with facility but have been able to understand the greatar part what you have written and there is a refernce to it in a leading article in "India" of July 30th.

भारतबन्धु सर हैनरी काटन के० सी०एस० आई० लिखते हैं "मैं आपके पत्र के लिये, तथा आपकी छोटी सी पुस्तक जो फ़िजी के विषय में है उसके लिये भी, आपका बहुत कृतज्ञ हूं। यद्यपि अब मैं हिन्दी सरलता के साथ नहीं पढ़ सकता हूं पर तब भी मैंने इस पुस्तक का अधिकांश समझ लिया है। ३० वीं जोलाई की 'इण्डिया' के सम्पादकीय लेख में इसका ज़िक्र किया गया है"

Shri Ramanand Chatterji M A Editor Modern Review- 'It would be good if somebody could publish an English translation of Pandit Tota Ram's Hindi book. For its own information the Government of India might get it translated."

श्रीयुत रामानन्द चटर्जी एम० ए० सम्पादक 'माडर्नरिव्यू' लिखते हैं "यदि कोई पं० तोताराम जी की हिन्दी पुस्तक का अंग्रेज़ी अनुवाद प्रकाशित करे तो अच्छी बात हो। भारत सरकार को चाहिये कि अपनी जानकारी के लिये इस पुस्तक का अंग्रेज़ी अनुवाद करवा ले"

पं० श्रीधर पाठक (सभापति पञ्चम हिन्दी साहित्य सम्मेलन) प्रयाग से लिखते हैं "इस पुस्तक में अमानुषीय कुलीप्रथा के पाशविक अत्याचार और नारकीय परिणाम लोमहर्षण रीति से वर्णित हैं। यह पुस्तक भारतवर्ष के प्रत्येक ग्राम और प्रत्येक परिवारमें पहुंचनी चाहिये कि जिससे इस पैशाच प्रथा की अभिज्ञता प्रत्येक नर नारी को अविलम्ब ही से होजावे और शीघ्र ही इस देश की भोली भाली प्रजा को आरकाटी नर पिशाचों के फंदे से बचने की क्षमता प्राप्त हो। इस पुस्तक को प्रकाशित कर फ़ीरोज़ाबादके भारती-भवन ने सच्ची लोक सेवा का कार्य किया है। आशा है कि इस पुस्तक के एक ही महीने में अनेक संस्करण निकलजांयगे प्रथम संस्करण इसका हाथों हाथ बिक जाना चाहिये"

कविवर श्रीयुत मैथलीशरणजी गुप्त इस पुस्तक को पढ़कर मेरा जी भर आया। मुझ जैसे नीरस हृदयजन की जब ऐसी दशा हुई तब कौन ऐसा सहृदय होगा जो इस कथा को सुन कर रो न उठे"

पं० माधवराव जी सप्रे बी० ए० (भूतपूर्व सम्पादक हिंदी केसरी) "वास्तव में इस पुस्तक से एक बड़ी देशसेवा हो सकती है । कुलीप्रथा के विरुद्ध आन्दोलन में इससे बड़ी सहायता ली जा सकती है"

समाचारपत्रों की समालोचनायें

Leader (Allahabad 25th May):--"......We draw the attention of the government and the public alike to a book entitled 'फ़िजी द्वीप में मेरे २१ वर्ष' or 'Twenty one years of my life in Fiji.' The book forms the second number of Bharti Granthmala. As the name of the book indicates the author Pandit Tota Ram Sanadhya has 21 years' experience of the Condition in Fiji whither he was enticed as an indentured labourer by emigration agents.

The book from the beginning to the end is full of the most horrible accounts of inhunan cruelty and hardships to which the indentured labourers are subjected from the moment they fall into the hands of the emigration agents until their return to their native-land.

The instances of inhuman treatment are so numerous that it is difficult to choose one as a sample. The condition of the indentured labourer there is so distressing as to rouse the sympathy and indignation of Indians and humane foreigners alike.......... Comment is needless. Not only national self-respect

but humanity demands that a system which allows such outrages to be perpetuated ought not to be allowed to continue for any length of time .... We hope the startling disclosers made in this book will receive the best attention from the Goverment of India and that they will not hesitate to adopt the drastic measures that seem to be urgently called for.''

लीडर (प्रयाग) "हम सरकार तथा सर्व साधारण का ध्यान 'फिजीद्वीप में मेरे २१ वर्ष' नामक पुस्तक की ओर आकर्षित करते हैं। यह भारती ग्रंथमाला की द्वितीय पुस्तक है। जैसा कि इसके नाम से प्रगट होता है, इस पुस्तक के रचयिता पं० तोताराम सनाढ्य को फ़िजी प्रवासी भारतवासियों की दशा के विषय में २१ वर्ष का अनुभव है। आप आरकाटियों द्वारा फुसलाये जाकर शर्तबन्दी में मजदूर की तरह फ़िजी को भेज दिये गये थे आरम्भ से लेकर अन्त तक यह पुस्तक उन अत्यन्त भयंकर अमानुषिक निर्दयताओं और तकलीफ़ों से भरी हुई है जो कि शर्तबंधे मजदूरों को आरकाटियों के हाथ में फंसने के समय से लेकर अपनी मातृभूमि को लौटने के समय तक दिये जाते हैं। अमानुषिक व्यवहारों के इतने अधिक दृष्टान्त इस पुस्तक में दिये गये हैं कि उन में से नमूनेके लिये किसी एक को चुनना मुश्किल है। फ़िजी के शर्तबंधे भारतीय मजदूरों की दशा इतनी अधिक दुःखपूर्ण है कि उसे पढ़कर भारतवासियों तथा सहृदय विदेशियों के दिल में क्रोध

और सहानुभूति उत्पन्न होगी। ....टीका टिप्पणी करने की आवश्यकता नहीं हैं। केवल राष्ट्रीय सम्मान की ही दृष्टि से नहीं बल्कि मनुष्यता की भी दृष्टि से यह बात आवश्यक है, कि जो प्रथा इस प्रकार के अत्याचारों को जारी रखने की आशा देती है, वह अब अधिक दिनों तक कायम रखने योग्य नहीं है। ....हमें आशा है कि जो आश्चर्य दायक पोलें इस पुस्तक में खोली गई हैं उनकी ओर भारत-सरकार का सर्वोत्तम ध्यान आकर्षित होगा और इस दुर्दशा को दूर करने के लिये अत्यन्त कठिन कानूनों को, जिनकी बड़ी भारी आवश्यकता है, प्रयोग में लावेगी"।

Tribune (Lahore) 2nd June " After twenty one years of a pathetic life Pandit Tota Ram has come back to India to relate the mysteries—(for so they are in the twentieth century under the regime of an enlightened nation) of his experiences in a foreign island. Every one who reads the book will not fail to see that the so called " Indenure System" is but another name for a civilized and constitutional form of oppressive slavery in modern times............The treatment awarded to the coolies is, to say the least , horrible and heart-rending and no Indian could read it without feeling how degraded he is in the scale of nations. The treatment awarded to Indian coolies of the fair-sex is enough to make one's blood boil and make ones

hair stand on end. After going throngh the whole of the book, one stands aghast at some of the deeds related therein ....Pandit Tota Ram in exposing the real state of affairs has not only done a great service to India but in a way to the whole world in as much as he has disclosed the dark side of modern civilization......... The book is admirably written out and is full of life and reality. The book cosists of 168 pages, valued at a reasonable price of 6 annas and deserves a thorough perusal at the hands of the philanthropist and patriot."

ट्रिब्यून (लाहौर) "२१ वर्ष के करुणोत्पादक जीवन के बाद पं० तोताराम सनाढ्य अपने वैदेशिक अनुभव के गूढ़ रहस्यों को प्रगट करने के लिये (क्योंकि एक सभ्यसरकार के राज्य में ये बातें गूढ़ रहस्यों के सिवाय और क्या हो सकती हैं) भारतवर्ष को वापिस आये हैं। इस पुस्तक के पढ़ने वाले प्रत्येक मनुष्यको यह बात अवश्य ज्ञात हो जावेगी कि 'कुली प्रथा' आधुनिक समय में अत्याचार पूर्ण गुलामी का एक नियमबद्ध और सभ्य स्वरूप है ....

कुलियों के साथ जो व्यवहार किया जाता है यदि हम उसे अत्यंत भयंकर और हृदय विदारक कहें तो भी थोड़ा होगा। जो भारतवासी इस पुस्तक को पढ़ेगा उसे यह बात अवश्य ज्ञात होजावेगी कि हम लोग दूसरी जातियों से कितने अधिक नीचे गिरे हुये हैं। कुली स्त्रियों के साथ जो दुर्व्यवहार किया जाता है उसे पढ़कर खून खौलने लगता है और रोंगटे खड़े

हो जाते हैं। इस पुस्तक को पढ़ चुकने के बाद पढ़नेवाला इसमें वर्णित अत्याचारों को स्मरण करके अचम्भे में रहजाता है। सच्ची हालत को खोलकर पं० तोताराम सनाढ्य ने केवल भारतवर्ष की ही सेवा नहीं की, बल्कि एक तरह सारी दुनियां की सेवा की है क्योंकि उन्होंने आधुनिक सभ्यता के दोष दिखला दिये हैं। पुस्तक के लिखने का ढङ्ग प्रशंसनीय है। यह पुस्तक ज़िन्दगी और सच्चाई से भरी हुई है। १६८ पृष्ठ की पुस्तक का मू० ६ आना उपयुक्त है। जगत हितैषियों और देशभक्तों को यह पुस्तक ख़ूब अच्छी तरह पढ़नी चाहिये"

Modern Review (April) "The author of this book was enticed to Fiji as an indentured labourer while he was yet a boy and had got only elementary education. But the striking fact in the book is that the way in which he has narrated his subject does not in the least show that he is not educated. Every aspect of the book,—its language and description, its style and arrangement, are of the best order. This is something strange, but nevertheless a fact. The book reads like a nicely written story and gives a store of useful information about the condition of Indian labourer in Fiji. It appears that the author besides working as a labourer, utilised most of his time in general culture of a superior order. The author lived in Fiji for tweny-one years and his experiences which he has mentioned are of a varied and most interesting nature."

माडर्न रिव्यू—"इस पुस्तक का रचयिता फुसलाकर शर्तबँधे मज़दूर की तरह फ़िजी को भेज दिया गया था जब कि वह बालक ही था और जब कि उसने केवल प्रारम्भिक शिक्षा ही प्राप्त की थी। लेकिन पुस्तक में आश्चर्यजनक बात तो यह है कि जिस ढङ्ग से ग्रन्थकर्ता ने अपने विषय का वर्णन किया है उससे यह बिल्कुल भी प्रगट नहीं होता कि ग्रन्थकार अशिक्षित है। पुस्तक का प्रत्येक रूप-उसकी भाषा, वर्णन, लेख शैली और क्रमविभाग—सब सर्वोत्तम ढङ्ग के हैं। यह बात आश्चर्योत्पादक होने पर भी सत्य है। यह पुस्तक पढ़ने में एक अच्छे ढङ्ग से लिखी हुई कथा की सी ज्ञात होती है, और फ़िजी के भारतीय मज़दूरों के विषय में इस पुस्तक में बहुतसी लाभदायक ज्ञातव्य बातें हैं। यह ज्ञात होता है कि ग्रन्थकर्ता मज़दूरी का काम करते हुए अपने समय के अधिकांश को उच्च प्रकार की सर्वाङ्गनी शिक्षा प्राप्तकरनेमें लगाता रहा है। ग्रन्थकर्ता २१ वर्ष तक फ़िजी में रहा है और अपने अनुभव जो उसने बयान किये हैं वे भिन्न २ प्रकार के और अत्यन्त मनोरञ्जक हैं"

India (London) 30th July 1915 :—"......And if we single out Fiji it is not because things are any better in Mauritius or British Guiana; but because we have here a witness who from his own experience can testify to the criminal methods under which recruits for

this army of forced labour are obtained. He has himself been a victim of the threats and misreprensentations which are employed to entice these unhappy people into the contractor's depot: and more fortunate than the rest, has lived to tell the tale.

इण्डिया (लंडन) "हमने ख़ास तौर पर फ़िजी के विषय में जो लिखा है इसका कारण यह नहीं है कि मौरीशस या बृटिश गायना में भारतवासियों की अवस्था फ़िजी की अपेक्षा अच्छी है बल्कि इसका कारण यह है कि हमारे पास यहां एक शास्त्री है कि जो कि अपने निज के अनुभव से इस बात के प्रमाण दे सकता है कि ज़बर्दस्ती काम लेने के लिये बहु-संख्यक भारतीय मज़दूरों को किन अपराध पूर्ण तरीक़ों से भर्ती किया जाता है। जो धोखे और धमकियाँ विचारे अभागे आदमियों को डिपो में फँसाने के लिये दीजाती हैं उनका वह स्वयं शिकार बन चुका है और इन सब से अधिक सौभाग्य की बात तो यह है कि वह इन कथाओं को सुनाने के लिये जीवित रहा है"।

Vedic magazine (Shravan 1972):—"The writer has done a public service by bringing out this booklet of more than 160 pages. It records many a tragedy—tales of nnbearable and indescribable woe and calamity—perpetrated on our innocent sisters—Hindus and Mohammaden— in this distant land. A perusal of the book will convince any and everybody that the

time has arrived when a supreme effort must be made to save the fair name of India and honour of Indian men and women. A special joint session of the Indian National Congress and the Mohammaden League can discuss the subject and take proper constitutional steps to remedy the state of affairs It would be a greater service to the country, if the book under review were rendered into English and published broadcast in England ....The book is interesting though it is melancholy reading ; and every Indian who prides himself on being a son of India would do well to read it carefully ..."

वैदिक मैगज़ीन (श्रावण १९७२):—"ग्रन्थकर्ता ने इस पुस्तक को लिखकर सर्वसाधारण की सेवा का एक कार्य्य किया है............इस पुस्तक में अनेक दुःखान्त कथायें हैं जो उन असह्य व अवर्णनीय दुःखों और शोकों से परिपूर्ण हैं जो कि हमारी हिन्दू और मुसलमान भगिनियों को भुगतने पड़ते हैं। इस पुस्तक को पढ़कर प्रत्येक मनुष्य अवश्य ही यह समझ जावेगा कि अब वह समय आ पहुंचा है जब कि भारत सम्मान की रक्षा के लिये और भारतीय स्त्री पुरुषों के जीवन को बचाने के लिये पूरा पूरा उद्योग करना चाहिये । कांग्रेस और मुसलिम लीग की एक मिली हुई बैठक में इस विषय पर विचार होना चाहिये । और इस दुर्दशा को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये । भारत के लिये यह बड़ी भारी सेवा होगी अगर कोई इस पुस्तक का अँग्रेज़ी अनुवाद करके इङ्गलैंड में इसका ख़ूब

प्रचार करे। पुस्तक मनोरञ्जक है लेकिन पढ़ के बड़ा दुःख होता है। प्रत्येक भारतवासी को, जिसके हृदय में भारतमाता की सन्तान होने का अभिमान हो, चाहिये कि इस पुस्तक को ख़ूब अच्छी तरह पढ़े।"

बङ्गालीभाषा के सर्वश्रेष्ठ मासिकपत्र "भारतवर्ष" (द्वितीयखण्ड संख्या ६) में श्रीयुत हंसेश्वर देव शर्मा जी एम. ए. ने इस पुस्तक के विषय में एक सचित्र लेख छपवाया था; उसमें उन्होंने लिखा था "भुक्त भोगी तोताराम ने अपने जीवन की लोमहर्षण करनेवाले अत्याचारों की जो कहानी लिखी हैं उन्हें पढ़कर आंसू नहीं रोके जा सकते.......... ओवरसियरों के अत्याचार, स्त्रियों के सतीत्व में हस्तक्षेप, सौदागरों के अत्याचार, वकील वैरिस्टरों की धनलोलुपता, धूर्तता और अत्याचारों को तोताराम ने जिस रूप और भाव से वर्णन किया है उसे पढ़कर शरीर का ख़ून सूख जाता है"

मराठी के सब से अधिक प्रभावशाली पत्र "केसरी" ने बड़ी ज़ोरदारभाषा में १$\frac{१}{२}$ लम्बे कालम इसके विषय में लिखे थे।

गुजराती प्रातःकाल (ज्येष्ठ १९७२) ने लिखा था "इस पुस्तक को पढ़ते २ पाठक के रोमाञ्च खड़े हुए बिना नहीं रह सकते........इसके वर्णनों को पढ़कर हृदय कांप उठता है"।

ज़माना, आर्यगज़ट, प्रकाश इत्यादि उर्दू पत्रों ने भी इस पुस्तक की बड़ी प्रशंसा की है।

हिन्दी समाचार पत्रों और पत्रिकाओं की सम्मतियों का सार

हिन्दी चित्रमय जगत (जनवरी और जुलाई १६१५) "पं० तोताराम जी के विषय में यहां पर आज कोई नई बात कहने की आवश्यकता नहीं है। अब हिन्दी संसार तोताराम जी से तथा उनके अनुपम देशकार्य से भली भांति परिचित हो चुका है। आपने २१ वर्ष के पूर्ण अनुभव से प्रवासी भाइयों की असहनीय दशा पर एक पुस्तक लिखी जिसके प्रकाशित होते ही कुली प्रथा के विषय में इतनी हलचल मची और उस पुस्तक का विज्ञ संसार में इतना प्रभाव हुआ जितना कि शायद ही अन्य किसी हिन्दी पुस्तक से हुआ हो। आप एक जोशीले लेखक हैं। आपकी लेखनी पाषाणहृदयी पुरुष का भी हृदय द्रवी भूत कर देती है..................आपने भारतीय भाइयों के असहनीय दुःखों को निज के अनुभव से इस तर्ज पर लिखा है कि अब कुली प्रथा का सच्चा २ ज्ञान प्रत्येक भारत के हितैषी को हो चुका है। इस पुस्तक को पढ़ने से ऐसा ज्ञात होता है कि मानों इस पुस्तक का प्रत्येक शब्द फ़िजी प्रवासी भारतीय कुलियों के दुःख स्रवित आँसुओं,

एवं कोड़ों की मार से उनके शरीर से निकलनेवाले लोहू से लिखा गया हो..............प्रत्येक गांव के पढ़े लिखे लोगों का कर्तव्य है कि वे इस पुस्तक की एक एक प्रति ख़रीद कर गांव के अपढ़ लोगों को सुनावें जिससे इन आरकाटी रूपी यमदूतों से उनकी रक्षा हो सके।

सर्व श्रेष्ठ हिन्दी मासिक पत्रिका "सरस्वती"

"भारत से जो कुली इस (फ़िजी) द्वीप को जाते हैं। उनके दुखों और आपदाओं का जो वर्णन आपने किया है। उसे पढ़ कर हृदय पर कड़ी चोट लगती है...........आपने बड़ी कृपा की जो यह पुस्तक लिखी। आशा है कि इस पुस्तक को देख कर हमारी आंखें खुल जांयगी और अपने देश बन्धुओं को इन यंत्रणाओं से बचाने की हम चेष्टा करेंगे।"

भारतोदयः—"यह पुस्तक क्या है नरक यातनाओं के भयानक चित्रों का एक बड़ा एलबम है जिसे देखकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं, दिल फटने लगता है और जिगर टुकड़े २ होने लगता है... ... ...हमने तबियत पर बहुत जब्र किया पर हम सारी पुस्तक नहीं पढ़ सके—कई स्थलों पर हृदय विदारक दृश्यों ने हृदय को अधीर कर दिया, दृष्टि पर आंसुओं

ने परदा डाल दिया। आंखों के आगे अंधेरा छा गया बुद्धि व्याकुल होगई, मन घबरा उठा, क्रोध लज्जा दुःख और शोक के वेग से सांस घुटने लगी, हाथ कांपने लगे, पुस्तक हाथ से छूट पड़ी..............हमारी सम्मति में यह पुस्तक कांग्रेस के प्रधानों की प्रेसीडैंशल स्पीच की जगह पढ़ी जानी चाहिये और बार बार पढ़ी जानी चाहिये। "

सम्पादक नवजीवनः—"पुस्तक अत्यन्त ही उपयोगी है और बड़े मनोरञ्जक ढङ्ग से लिखी गई है प्रत्येक देशाभिमानी को इसे पढ़ना चाहिये।"

सम्पादक विद्यार्थी—(मार्च) "लीजिये इसे पढ़िये और आठ आठ आंसू रोइये। भारत के जो नर नारी बहका कर फिजी द्वीप में कुली बनाकर भेजे जाते हैं। उनके साथ वहां कैसा वर्ताव होता है इसका बड़ा हृदय बेधक रोमांञ्चकारी फोटो इस पुस्तक में खींचा गया है। हम चाहते हैं कि भारत का प्रत्येक नेता इस अत्याचार की ओर ध्यान दे प्रत्येक हिंदी जानने वाले भारत वासी को यह पुस्तक अवश्य पढ़कर अपने भाइयों की स्थिति का ज्ञान करना चाहिये....... यदि भारत वासियों को कुछ भी देश प्रेम है कुछ भी जाति हितैषिता है और कुछ भी आत्म सम्मान की मात्रा शेष है तो उन्हें इस पुस्तक को विना पढ़े न रहना चाहिये। "

सद्धर्म प्रचारक—(५ जून) "विदेश में गये हुये और विशेषतया उपनिवेशों में पहुंचे हुये भारतवासियों के साथ

जो कुव्यवहार होते हैं वे न जाने कितनी बार हम पढ़ चुके हैं तो भी जब हमारे सन्मुख यह छोटी सी पुस्तक आई और हमने इसे पढ़ा तो हमारी आंखों से कई बार आंसुओं की धारा बहने लगी ....हम आर्य भाषा समझनेवाले सब सज्जनों से निवेदन करते हैं कि वे इस पुस्तक को एक बार पढ़ देखें...........जिस स्वाभाविक तथा मनोरंजक रीति पर ऐसे मनोवेधक कथानक का वर्णन लेखक ने किया है वह प्रशंसनीय है।"

हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक श्रीयुत गिरजा कुमारघोष सम्मेलन पत्रिका (श्रावण) में लिखते हैं "आरकाटियों के दुराचरणों को हिन्दीभाषा संसार के सामने प्रकट करने के लिये ग्रन्थकार का अवतार हुआ था.............इस दुःख की कथा और श्वेतवर्ण दानवों की दानवी लीला के सत्य वर्णनों को पढ़ते २ नेत्रों से अकस्मात् आंसू निकल आते, हैं। शरीर पर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। इस महापाप पूर्ण गुलामी की प्रथा की जड़ कैसे उखड़ेगी, सोचते २ कलेजा कांप उठता है..............हिन्दी के अक्षर मात्र का भी जिसको ज्ञान है उसे तोताराम जी की पुस्तक मंगवाकर पढनी चाहिये। हमारी तो राय यह है कि ऐसी पुस्तकें और भी प्रकाशित हों और प्रत्येक की १००० नहीं कम से कम दस हजार प्रतियां छाप कर गांवों में बिना मूल्य बाँटी जावें............इसका विषय ऐसा मर्मभेदी है इसकी कथायें ऐसे अच्छे ढङ्ग से

लिखी गई हैं कि हमको आशा है कि पहले संस्करण की सब प्रितियाँ झटपट निकल जांयगी।

नवनीत (वैशाख) "इसे पढ़कर हमारे पाठक जान जावेंगे कि फ़िजी आदि उपनिवेशों में भारतवासियों के बालों की खाल खींची जाती हैं और भारत की सती स्त्रियों का सतीत्व नष्ट करने के लिये उनपर कैसे दानवी अत्याचार किये जाते हैं। पुस्तक की भाषा ओजस्विनी है, भावदेशभक्ति-पूर्ण हैं, घटनायें सत्य और प्रमाणयुक्त हैं। पुस्तक पढ़कर रो न दे ऐसा मनुष्य विरला ही होगा"

तरंगिणी (जून):—"आपने जिन घटनाओं का वर्णन इस पुस्तक में किया है उनके पढ़ने से एक वार कलेजा दहल उठता है। आपने इस पुस्तक को लिखकर बड़ाभारी उपकार किया है यद्यपि हमारे सभी देश बान्धवगण इस कुली प्रथा रूपी रौरव यातना तुल्य असह्य कष्ट से परिचित हैं तथापि इस पुस्तक के पढ़ने से उनके पढ़ने में एक प्रकार के नवीन संस्कार उत्पन्न होने की सम्भावना है .....इसकी भाषा सरल, विषय नया और सब के पढ़ने लायक है"।

ब्राह्मण सर्वस्व (जनवरी) 'आपने इसमें कितनीही हृदय द्रावक घटनाओं का वर्णन किया है, जिनके पढ़ने से आंखों से आंसू गिरने लगते हैं। हमारी समझ में प्रत्येक शिक्षित भारवासी को इस पुस्तक की एक एक प्रति खरीद कर अपने अपढ़ भाइयों को सुनाना चाहिये"।

प्रताप:—"इसे पढ़कर कौन ऐसा भारतीय होगा, जो अपनी इस हीन अवस्था पर दो आंसू न गिरावे और जिसका हृदय मनुष्यता की गर्दन इस पशुता के साथ नापी जाती देख कर दग्ध न हो उठे। पुस्तक अपने जातीयमान और अपमान की दृष्टि से पढ़ी जाने योग्य है।

प्रभात:—"पुस्तक बहुतही अच्छे ढङ्ग से लिखी गई है। जिनको जात्मसम्मान, स्वदेश प्रेम और स्वधर्माभिमान का विचार है उन्हें यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिये।

स्वदेशवान्धवः—......"किसी भी उपन्यास से बढ़कर इस पुस्तक के लेख प्रभावोत्पादक हैं।

ऊषा:—"..........पुस्तक में वर्णित अत्याचारों को पढ़ कर हृदय कांप उठता है और अपनी दुर्दशा पर रोना आता हैं। पुस्तक बड़ी सरल और रोचक भाषा में लिखी गई है"।

सुधानिधि (फालगुण):—"इसे पढकर रोवें खड़े हो जाते हैं पत्थर पसीजने लगता है। इस पुस्तक का प्रचार प्रत्येक देहात में होना चाहिये और पढ़े लिखे लोगों का कर्तव्य है कि वे सब जगह के लोगों को बताते रहें कि कलोनियों में बेइज्ज़त होने के लिये कोई न जावे। .....पुस्तक की आमदनी ऐसे ही काम में लगाई आवेगी इसलिये इसके ख़रीदने से 'एक पन्थ दो काज' होगा"।

इनके अतिरिक्त कलकत्ता समाचार भास्कर, गौड़ हित कारी, हिन्दी समाचार आदि कितने ही अन्य हिन्दी पत्रों ने इसकी प्रशंसा की है।

कृषककथा

(शीघ्र ही छपेगी)

(ले० कविवर श्रीयुत मैथिलीशरणजी गुप्त)

प्रकाशक रामकिशोर गुप्त चिरगांव झांसी—यह सर्वोत्तम पुस्तक शीघ्र ही छपेगी। सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय कवि गुप्तजी की कविता के विषय में कहना ही क्या है। इस पुस्तक को पढ़कर पाषाणहृदय मनुष्य का भी दिल पिघल सकता है। भारतीय कृषकों की दुर्दशा का हाल पढ़ते २ आंखों से आंसू निकल पड़ते हैं। प्रत्येक भारतीय को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिये।

मिलने का पताः—श्री रामकिशोर गुप्त, चिरगांव-झांसी

हिन्दी उत्तर राम-चरित्र नाटक

(भारतीय ग्रन्थमाला की प्रथम पुस्तक) मूल्य ॥।) अनुवादकः—पं० सत्यनारायण कविरत्न।

महाकवि भवभूति को संस्कृत साहित्य में कौन नहीं जानता? उन्हीं के ग्रन्थरत्न का यह अनुवाद है। पं० सत्य-नारायण के विषय में यहां कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है हिन्दी साहित्य सम्मेलनों के अवसर पर उनकी कविता की सरसता और मधुरता की प्रशंसा की जा चुकी है।

इस पुस्तक के विषय में पं० महावीर प्रसाद जी द्विवेदी सरस्वती (फ़र्वरी १६१४) में लिखते हैं "भवभूति" के प्रसिद्ध

नाटक उत्तर राम-चरित्र का यह अनुवाद है। गद्य पद्य मय है। आज तकइस नाटक के जितने अनुवाद हमारे देखने में आये हैं उन सब से यह अच्छा है। आरम्भ की विस्तृत भूमिका अनेक ज्ञातव्य विषयों से परिपूर्ण है"

सुधानिधि (चैत्र)...........उत्तर रामचरित्र का एक अनुवाद वर्षों पहिले हो चुकाहै परन्तु यह निस्सङ्कोच कहा जा सकता है कि यह अनुवाद जैसा सजीव है, उससे पढ़ने वाले इसे अनुवाद नहीं बल्कि स्वतंत्र रचना के समान समझेंगे। उत्तर रामचरित्र करुणारस प्रधान नाटक है और कविरत्न जी की ब्रजभाषा की कविता ऐसो उत्तम होती है कि वह करुणा रस को मानो साक्षात करदेती है। यद्यपि मूल ग्रन्थ की उत्तमता और सरसता किसी भी अनुवाद में आना कठिन है, तथापि यह रचना ऐसी उत्तम हुई है कि शायद ही कोई ऐसा पाषाण हृदय हो जो इसे पढ़ करुणापरिप्लुत हो रो न दे.........हमें आशा है कि हिंदी पाठक ऐसी पुस्तकों को अपनाकर अपना कर्त्तव्य पालन करेंगे"

प्रतापः—"इसके अनुवादक हैं हिन्दी के सुयोग्य कवि श्रीयुत सत्यनारायण शर्मा कविरत्न। कविरत्न जी ब्रजभाषा के सहृदय कवि हैं। आपकी सरस कविता का आस्वादन हमारे पाठक किसी दूसरे रूप में कर चुके हैं। इस अनुवादित गद्य पद्यमय ग्रंथ का गद्यभाग तो अच्छा है ही, परन्तु पद्य भाग में भाषा का लालित्य और कवि की स्वाभाविकता का बहुत

ही अच्छा प्रदर्शन होता है । पुस्तक उपादेय है ”

ब्राह्मण सर्वस्व (अप्रैल १६१४) ‘ पं० सत्यनारायण जी ब्रजभाषा की कविता लिखने में सिद्धहस्त हैं । आपने भव-भूति के भावों, पदों और अर्थों का अच्छा अनुगमन किया है और इस दृष्टि से यह अन्य अनुवादों से अच्छा हुआ है। पुस्तकान्त में आपने कठिन शब्दों के अर्थ भी दिये हैं इस तरह यह पुस्तक उपयोगी हो गई है··········फीरोज़ाबाद के भारतीभवन के सञ्चालकों को ऐसी उपयोगी पुस्तक प्रकाशित करने के लिये हम धन्यवाद देते हैं”

इसके अतिरिक्त बाबू श्यामसुन्दर जी बी० ए० तथा हिन्दी के अन्य २ विद्वानों ने भी इसकी बहुत प्रशंसा की है

ग्रन्थकार के चित्र सहित बड़ी साइज़ की पुस्तक का मूल्य केवल बारह आना है ।

हमारे यहाँ मिलने वाली अन्यपुस्तकों की सूची

नवनीत कार्य्यालय के राष्ट्रीय ग्रन्थ

सरलगीता ।॥)

धर्मवीर गान्धी ।)

महाराष्ट्र रहस्य ~)॥

हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्य्यालय की पुस्तकें ।

शान्ति कुटीर ।॥)

स्वाधीनता २)

आंख की किरकिरी १॥)

चौबे का चिट्ठा ॥=)

स्वदेश (रवीन्द्र बाबू के निबन्ध ॥=)

चरित्र गठन और मनोबल ≈)

आत्मोद्धार १।)

सफलता और उसके साधन के उपाय ॥)

स्वावलम्बन १॥।)

अन्नपूर्णा का मन्दिर ।॥)

कठिनाई में विद्याभ्यास ।।=)

विद्यार्थी कार्य्यालय की पुस्तकें

रामायण रहस्य ।=)

स्त्री जाति का महत्व ≈)

उपदेश मञ्जरी ।=)

शब्द रूपावली ≈)

पद्य प्रबोध ।=)

प्रताप कार्य्यालय की पुस्तकें

जर्मन जासूस ।)

हिन्दी गीताञ्जलि १)

कविवर मैथिली शरण जी की पुस्तकें

जयद्रथबध ॥)
शकुन्तला ।=)
रङ्ग में भङ्ग ।)
अजाङ्गना ।)
भारतभारती १)
कृषक कथा (शीघ्र ही छपेगी)

ओंकार प्रेस प्रयाग की पुस्तकें

शान्ता ॥)
आदर्शपरिवार ॥=)
लक्ष्मी ।)
कन्या-सदाचार ।)
कन्या-पत्र दर्पण -)
सौन्दर्य्य कुमारी ।-)
हंसाने वाली कहानियां ।)
स्वामी विवेकानन्द ।)
स्वामी दयानन्द ।)
समर्थगुरु रामदास ।)
स्वामी रामतीर्थ ।)
माहात्मा गोखले ।)

इनके अतिरिक्त स्वदेशबान्धव कार्य्यालय, अभ्युदय कार्य्यालय, पद्मकोट ग्रन्थमाला इत्यादि की पुस्तकें भी यहां मिल सकती हैं।

पता:—भारती भवन
फीरोज़ाबाद (ज़िला आगरा)